भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 10 | **सितम्बर-अक्टूबर** 2009 | **अंक** 9-10

पुस्तक

विकसित वाणी ने जन्म दिया भाषा को,
उत्पन्न कर दिया फिर लिपि की आशा को।
लिपि ने भाषा को लिखकर रूप दिया जब,
अस्तित्व हुआ जग में मेरा संभव तब।

मैं ताम्रपत्र से हस्तलिखित पत्रों तक,
मुद्रण की कला ललाम ललित चित्रों तक-
का नहीं चाहती आज वृत्त दुहराना,
युग-युग ने मेरा मूल्य सदा है जाना।

मैं ज्ञान नंदिनी भव्य भाव की पत्नी,
करनी को प्रेरित करने वाली कथनी।
हैं भाव प्राण मेरे तो शैली तन है,
अक्षर-अक्षर में छिपा पड़ा जो धन है।

मैं मानव की उपलब्धि सुरक्षित रखती,
उपलब्ध उसे मैं वस्तु प्रतीक्षित करती।
मेरा विकास यंत्रों से सुलभ हुआ है,
मेरा प्रकाश तंत्रों से तीव्र हुआ है।

हैं सभी तंत्र मुझको आधार बनाते,
सिद्धान्त और गुण मुझसे ही दर्शाते।
मुद्रित होने से पूर्व पाण्डुलिपि संज्ञा
दे देना है अपमान नहीं मेरा क्या?

मैं पूर्ण हुई जिस क्षण उस क्षण ही पुस्तक,
प्रतिकृतियों का ही मूल्य कहाँ था अब तक?
जब हस्तलिखित थी तब होती लेखक की,
अब मेरी आकृति हो जाती है सबकी।

जब व्यक्ति विशेष न होता है अधिकारी,
पुस्तक आलय को शोभा देती प्यारी।
जनतंत्र कहीं तो राजतंत्र है होता,
मेरा व्यक्तित्व प्रसिद्धि बीज है बोता।

मैं समय-समय पर नूतन बंधन सहती,
फिर खड़ी किवाड़ों के पीछे ही रहती।
यश लाभ-अर्थ या साहित्यिक-सेवा को-
जब दे जाता है व्यक्ति यहाँ पर मुझको,

मैं सदा पराये हस्तों में जाती हूँ,
पशुता को मानवता तक ले आती हूँ।
मैं सार्वजनिक हित को लेकर बढ़ती हूँ,
मुझको जो पढ़ता मैं उसको पढ़ती हूँ।

शेष पृष्ठ 4 पर

तमसो मा ज्योतिर्गमय

मानव-सभ्यता के विकास के साथ रचनात्मक साहित्य और संस्कृति की आन्तरिक संवेदना और अवधारणा के साथ मनुष्य में 'स्व-तंत्र' होने का मनोभाव विकसित हुआ है। ऐतिहासिक संघर्षों और पारिस्थितिक कारणों से कभी कोई मानव-समुदाय अपनी आज़ादी खो देता है किन्तु स्वतंत्र होने की छटपटाहट उसमें बनी रहती है। यही मानवीय भाव-विवशता जब साहित्य के माध्यम से मुखर होकर जातीय एवं राष्ट्रीय अनुप्रेरणा बनती है तभी संघर्ष तीव्र होता है और अंततः स्वतंत्रता प्राप्त होती है। हमारे देश में भी बर्तानवी-हुकूमत से संघर्ष की प्रेरणा युगीन परिस्थितियों के बीच रचे गये साहित्य से उपजी थी। उस दौर में रचित सभी भारतीय भाषाओं का आधुनिक साहित्य पुनर्जागरण, आत्मगौरव और स्वातंत्र्य-चेतना से उद्दीप्त है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव हमारे स्वतंत्रता-संघर्ष पर दिखलायी पड़ता है।

किन्तु आज़ादी के 62 वर्षों बाद आज स्थिति बिलकुल बदल चुकी है। आज जन-प्रतिबद्धता के बावजूद हमारा साहित्य अनुप्रेरक नहीं बन सका है। युवा और सामान्य जन साहित्य-संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं। परिणामतः बौद्धिक-मानसिक, नैतिक और चारित्रिक दृष्टि से उनके व्यक्तित्व का समग्र विकास प्रभावित हो रहा है। मनुष्य के व्यक्तित्व-विकास का यह अवरोध हमारे वर्तमान की वैश्वक-समस्या है। आज 'स्व' और 'स्वार्थ' के दायरे में सिमट कर रह गयी है हमारी सांस्कृतिक-चेतना, जिसका प्रवक्ता है समूचा 'मीडिया-तंत्र'। यह तंत्र जिन अदृश्य-शक्तियों द्वारा संचालित है उनके स्वार्थों को सिद्ध करते हुए हमें सूचनाएँ तो मुहैय्या कराता है किन्तु मानवीय-संवेदना को, उसके दर्शन-चिन्तन को, उसके व्यक्तित्व और सामाजिक-संघर्ष की धार को लगातार कुंठित करता चलता है। इस तंत्र की वास्तविकता को समझते हुए हमें आत्मनिरीक्षण करना होगा, अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा, राष्ट्रीय आत्मगौरव और सांस्कृतिक-संवेदना के साथ उस तंत्र का पर्दाफ़ाश करना होगा जिसकी गिरफ्त में हम आर्थिक गुलामी की ओर बढ़ रहे हैं।

अपनी आज़ादी की इस दूसरी लड़ाई में हमारी शिक्षा ही हमारा माध्यम बन सकती है। शैक्षणिक-प्रक्रिया में शामिल किशोर-युवा मानसिकता के सम्यक् संस्कार द्वारा उसकी स्वतंत्रत उद्भावनाएँ जागृत की जा सकती हैं जो उसे रचनात्मक; संवेदनापरक और संघर्षशील बनाने में सहायक हों। शिक्षा के क्रम में ही मनुष्य के 'स्व' का दायरा फैलता है और वह अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक परतंत्रता को दूर करने के लिए प्रतिबद्ध होता है।

इसी प्रतिबद्धता को जगाने के लिए हमें अपने साहित्य और संस्कृति की पड़ताल करनी होगी जिसके आधार पर नवीन अनुप्रेरणा के कारक प्रतिमानों की सर्जना की जा सके। राजनीतिक स्वतंत्रता की लड़ाई के दरम्यान होली-बैसाखी, दशहरा-दीवाली जैसे त्यौहार भी हमारे संघर्ष की अभिव्यक्ति करते थे जबकि वर्तमान दौर में बाज़ार ने हमारे तीज-त्यौहार भी हस्तगत कर लिये हैं, उन्हें उनकी प्राकृतिक-संरचना से अलग करते हुए

शेष पृष्ठ 2 पर

पुण्य-तिथि पर स्मरण

चंद्रधर शर्मा गुलेरी

कांगड़ा जिले की पहाड़ियों पर कई छोटे-छोटे राज्य थे। उनमें गुलेर भी एक था। चंद्रधर शर्मा गुलेरी का सौभाग्य था कि उनकी शादी पसंद की लड़की से हो गई, जो पास के हरिपुर की थी। उनका पारिवारिक जीवन सुखमय था। इस प्रसंग को चंद्रधर शर्मा गुलेरी (जन्म 7 जुलाई 1883, निधन 11 सितम्बर 1922) ने अपनी कहानी 'बुद्धु का कांटा' में अवतरित किया है। 'रचना संचयन' में 'उसने कहा था' और 'सुखमय जीवन' भी सम्मिलित हैं। इन तीनों कहानियों को पढ़ने से हम चंद्रधर शर्मा गुलेरी के निजी जीवन और उनके कांगड़ा के परिवेश की झलक प्राप्त कर सकते हैं। इन तीनों कहानियों में 'उसने कहा था' विश्व की श्रेष्ठ कहानियों में से गिनी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी इसकी बहुत सराहना की है। इसी नाम से इस पर बाद में एक फिल्म भी बनाई गई। आत्मकथात्मक शैली में लिखी 'सुखी जीवन' कहानी 1911 में छपी। 'उसने कहा था' कहानी प्रथम विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी गई।

जयपुर के एक महाविद्यालय में चंद्रधर शर्मा गुलेरी के पिता शिवराम शास्त्री आचार्य थे। वहीं चंद्रधर की आरम्भिक शिक्षा पूर्ण हुई। 1903 में चंद्रधर ने प्रयाग में स्नातक परीक्षा पास की। इसके बाद उन्होंने मेयो कालेज के संस्कृत विभाग में कार्य किया। इनके पढ़ाने की शैली और ज्ञान से प्रभावित प्रबन्धकों ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राचार्य पद का कार्यभार सौंपा। चंद्रधर शर्मा, बांग्ला, मराठी, प्राकृत, पाली आदि भाषाओं के विशेषज्ञ और भाषाविज्ञान के विद्वान थे। चंद्रधर की रुचि आध्यात्मिक लेख लिखने में थी। उनको पुस्तक समीक्षा करने का श्रेय भी प्राप्त था। उन्होंने गुलेर नाम को अपने नाम से जोड़कर खूब चमकाया। गुलेर के चंद्रवंशी राजा बलदेव सिंह ने अपने राजतिलक महोत्सव के शुभअवसर पर चंद्रधर शर्मा गुलेरी को आमंत्रित किया। जब राजगुरु के रूप में उनसे महाराज को तिलक करने का आग्रह किया गया तो उन्होंने अपने चचेरे भाई कीर्तिधर शर्मा को प्रस्तुत किया। कीर्तिधर तब तीन महीने के शिशु थे। कीर्तिधर को यह यादगार मौका मिला कि वह अपने पिता रामलाल जी राजगुरु के न रहने पर अधिकारपूर्वक बलदेव सिंह का तिलक कर सके। इस घटना से चंद्रधर शर्मा की संवेदनशीलता, न्यायप्रियता और शिशुप्रियता के प्रमाण मिलते हैं।

पृष्ठ 1 का शेष

मनोरंजक और 'हाई-टेक' बना दिया है। शारदीय पूजा में हम अपनी फसल का शस्य-श्यामल नवान्न लेकर मातृशक्ति की अर्चना करते थे, शरद्-चाँदनी के महारास में नाच उठते थे जड़-चेतन, मिट्टी के दिये में स्नेह की बाती जलाकर आलोक-अल्पना रचती थी दीपावली, किन्तु आज कहाँ खो गये हमारे सांस्कृतिक प्रतिमान? अँधेरा बढ़ता जा रहा है फिर भी बिखर रही हैं ज्योति-किरणें, अक्षुण्ण है हमारी आन्तरिक ऊर्जा।

आत्म-ऊर्जा की ज्योति से दीपावली का दीप जलाते हुए नये संकल्प के साथ हमें असत् से सत् की ओर बढ़ना होगा, नूतन साहस का संचार करते हुए मृत्यु से अमृत की ओर यात्रा करनी होगी, नयी प्रेरणा लेकर अन्धकार पर प्रकाश की विजय का उद्घोष करना होगा—

असतो मा सद् गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय॥

सर्वेक्षण

भाषा नीति की चुनौतियाँ : भारतीय संविधान के निर्माताओं ने काफी विचार-विमर्श के बाद संविधान की आठवीं अनुसूची में 14 भारतीय भाषाओं को स्वीकृति प्रदान की, जिनमें से हिन्दी भी एक थी। जिसे एक उपधारा के अन्तर्गत राजभाषा का दर्जा दिया गया। संविधान द्वारा स्वीकृत 14 भाषाओं की संख्या राजनीतिक-दबाव के चलते 22 हो चुकी है। किसी भी राष्ट्रीय सरकार के लिए इतनी भाषाओं में कामकाज करना और सबके बीच सामंजस्य बनाये रखना अपने-आप में एक बड़ी समस्या है। इस भाषागत कठिनाई के बावजूद संविधान की आठवीं अनुसूची में अन्य 38 क्षेत्रीय बोलियों को शामिल करने और मान्यता प्रदान करने का प्रस्ताव है। भाषायी-आँकड़े के अनुसार देश में कुल 415 बोलियाँ हैं, जिन्हें बोलने वालों की तादाद भी कम नहीं। प्रस्तावित 38 बोलियों को स्वीकृति प्रदान करने से कितनी विभाजनपरक समस्याएँ जन्म लेंगी इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। भाषा-नीति को लेकर संवैधानिक निर्णय के पूर्व निरीक्षण परीक्षण और संभाव्य खतरों का आकलन ज़रूरी है अन्यथा राजनीति के दुश्चक्र में भाषा के नाम पर सामाजिक-सांस्कृतिक अराजकता का प्रसार आरम्भ हो जायेगा।

जय हिन्दी, जय नागरी : हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का संघर्ष लम्बा रहा है। ब्रिटिश प्रशासन के दरम्यान इस भाषा और लिपि ने अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ी और शिक्षण-प्रशिक्षण के साथ-साथ सरकारी-महकमों में भी जगह बनाने लगी। देश के नेताओं ने अपने संघर्ष की भाषा 'राष्ट्रवाणी हिन्दी' को 'राष्ट्रभाषा' की प्रतिष्ठा दी। आज़ादी के बाद हमारे संविधान-निर्माताओं ने बदली हुई परिस्थिति में, हिन्दी को राजभाषा का दर्ज़ा प्रदान किया जबकि व्यवहार में हमारे केन्द्रीय शासन की अभिव्यक्ति और सम्पर्क की भाषा अंग्रेजी ही बनी रही। यही यथास्थिति आज तक कायम है जिसकी वजह से अंग्रेजी देश की प्रतिष्ठाभाषा के रूप में प्रतिष्ठित है और हिन्दी दोयम दर्ज़े की भाषा है। इस आत्महीनता के बावजूद हिन्दी का संघर्ष जारी है। साहित्य-संस्कृति की अभिव्यक्ति के साथ शिक्षण-प्रशिक्षण, शासन-प्रशासन, बाज़ार और लोक-व्यवहार में हिन्दी आज भी 'राष्ट्रवाणी' का दायित्व निभा रही है। राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत में व्यापार और सांस्कृतिक-सम्पर्क की भाषा के रूप में हिन्दी सर्वत्र समादृत है। अत: हिन्दी के 'राजभाषा' स्वरूप के बारे में चिन्ता न करते हुए हमें देश के अन्य भाषा-भाषी जन और सरकारों को 'राष्ट्रभाषा' के प्रति जागृत करना होगा। कोटि-कोटि कंठ से निकलते जनघोष के बीच हिन्दी स्वयं अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेगी और मुखरित हो उठेगा—

जय-हिन्दी, जय-नागरी।
जयति सकल गुण-आगरी।

—परागकुमार मोदी

आज की हमारी शिक्षा

—हंस कुमार तिवारी

साहित्य क्यों लिखता है आदमी! अगर आपको रोना हो, हम घर पर रो सकते हैं। लेकिन हम रोते इसलिये हैं कि हमने जो दु:ख महसूस किया वह और लोग भी करें। तो ताजमहल क्या है, प्रेम की हमारी वेदना, जीवन में जिस चीज को हमने प्यार किया है उसके खो जाने से हमें क्या दर्द होता है—वह समझें। शाहजहाँ को ज्ञात था—काल किसी को नहीं छोड़ता। कवीन्द्र रवीन्द्र कह गये—रे मनहूस और अकरुण काल! तुझे इंसान की उस वेदना के लिये कोई दर्द नहीं। तो ले—मैं वेदना की आँसू की एक बूँद तेरे ही गाल पर रख देता हूँ, तू जब तक रहेगा, रोता रहेगा। यह वेदना की कीमत है। उस वेदना को रूप देने के लिये वाणी क्या कम होती है? इसलिये आज जो विरासत आपकी जीवित है, वह इन आन्दोलनों से नहीं वह इन बड़े लोगों के चलते नहीं जिन्हें हम मानपत्र दिया करते हैं—सुबह-शाम। ये उन लोगों की बदौलत जीवित है जिन्होंने न खाकर, भूखे-नंगे रहकर, अभाव में जर्जर होकर, सदा अपने जीवन की अनुभूतियों को रूप दिया। राम मर गये, राम की अयोध्या समाप्त हो गयी। राम के युग का समाज आज नहीं है। एक आदमी मिला कवि वाल्मीकि जिसने राम को भी रख लिया, अयोध्या को भी रख लिया। अर्जुन, भीम, युधिष्ठिर सारे के सारे चले गये। एक व्यास थे जिन्होंने उन्हें रख लिया। आज भी अगर कोई संचित निधि आपकी रह जाती है तो इसी के द्वारा। इसलिये हमारे अगले मन्दिर, मस्जिद, गिरजा ये छोटे-बड़े विद्यालय, महाविद्यालय होंगे। और इस पूजा को जीवित रखने के लिये हमारी शिक्षा और दीक्षा है।

विज्ञान ने हमें चन्द्रमा तक पहुँचाया और राजनीति ने हमें दूर कर दिया। मानवता को एक करने का अगर कोई मन्दिर होगा तो यह हमारे विद्यालय होंगे, हमारे शिक्षा-संस्थान होंगे। हमारे वे झोपड़े होंगे जहाँ कोई कलाकार अपनी जिन्दगी की साधना स्याही के अभाव में भी साध रहा होगा, जहाँ कोई लेखक स्याही के अभाव में भी मानवता के कल्याण का कोई मंत्र रच रहा होगा। आज के छात्र, छात्रायें समझें कि वे सिर्फ रोटी खाने के लिये नहीं जी रहे हैं, मनुष्य बनने के लिये जी रहे हैं और जिस दिन हम मनुष्य बनेंगे तो आपस की यह दूरी, भेद-भाव दूर हो जायेंगे।

विज्ञान में मनुष्य के जीवन के दो प्रस्तुत अंगों की चर्चा है—मन और मस्तिष्क। दोनों एक ही हैं, जैसे ईश्वर को जानने के लिये हमें उनके तीन रूप मिलते हैं—ब्रह्मा, विष्णु, महेश। एक जन्म देता है, एक पालन करता है और एक संहार करता है। उसी तरह मन और मस्तिष्क भी हैं। इन दोनों की जोड़ी मिली-जुली होनी चाहिए। अगर मस्तिष्क बहुत प्रबल हो गया तो आदमी मशीन हो जाय या पागल हो जाय। इन दोनों के संतुलन की जरूरत है। दोनों साथ-साथ चलें तो सही रूप बनेगा। आज हम देखते हैं कि मनुष्य मशीन ज्यादा हो रहा है। उसमें इन्सानियत की थोड़ी कमी पड़ती जा रही है। आज मामूली तौर पर आप देखें कि सामने दुर्घटना हो रही है, एक पड़ोसी के दु:ख में हमको कोई सहानुभूति, कोई हमदर्दी नहीं होती। एक जगह बाजा बज रहा है, दूसरी जगह मर्सिया हो रहा है। यह जो सामाजिक सहानुभूति है, हमारे देश से विलीन हो रही है। उसमें हमारी शिक्षा का बहुत बड़ा हाथ है। हमारे यहाँ आज पाठ्यक्रम में कक्षा दो से नागरिक शास्त्र की पुस्तकें पढ़ायी जाती हैं और हाई स्कूल तक आते-आते किताबें मोटी हो गयीं किन्तु इतिहास साक्षी है कि जिन दिनों नागरिक शास्त्र की कोई पढ़ाई नहीं होती थी, हमारे देश के बच्चे नागरिक पैदा होते थे, और जब नागरिक शास्त्र की मोटी-मोटी पुस्तकें पढ़ाई गईं, इतिहास कितना अनागरिक हो गया। नागरिकता के लिये किसी थोपी पढ़ाई की जरूरत नहीं है। अतीत में हमारा घर विश्वविद्यालय था, हर घर चटशाला थी, हर घर पाठशाला था। जहाँ बच्चे अपने माँ-बाप के प्रभाव से संस्कार के द्वारा सभी चीजें ले लेते थे। उनकी नसों में, उनकी धमनियों में खून के साथ विद्यायें आती थीं लेकिन मन और मस्तिष्क में मेल अब नहीं हुआ करता। तुलसीदास की एक पंक्ति है—''एक साथ कोई गाल नहीं फुला सकता और हँस नहीं सकता, या तो गाल फुलाले या हँसले।''

दूध में पानी मिल सकता है, पानी में तेल नहीं मिल सकता। हमने पानी और तेल का मेल मिलाया है। आज इस मन और मस्तिष्क को मिलाकर हमें आदमी बनना है।

[नगरपालिका कन्या महाविद्यालय, कासगंज (उत्तर प्रदेश) में दिये दीक्षान्त भाषण (अप्रैल 1976) से उद्धृत]

पुस्तकों का संसार अद्‌भुत है। यूरोप ने इसलिए सबसे अधिक प्रगति की क्योंकि वहाँ पुस्तकें भोजन-पानी की तरह ही जीवन का अंग रही हैं। वहाँ चाहे और कुछ हो न हो, हर घर में पुस्तकों की लायब्रेरी अवश्य होती है।

शासन द्वारा साहित्यकारों की उपेक्षा

—प्रो० राजेन्द्र मिश्र

पूर्व कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

भारत में आज क्या हो रहा है, किसी से छिपा नहीं। राष्ट्राभ्युदय के सारे स्रोतों का ध्रुवीकरण शासनतंत्र में दीख रहा है। शिक्षा, संस्कृति, सैन्यबल, न्याय व्यवस्था, क्रीड़ा, कला, अभिनय, मान-सम्मान—प्रत्येक क्षेत्र का नियन्त्रण राजनेताओं के हाथ में है। बिना उनकी कृपा के आपको कहीं भी सफलता नहीं मिल सकती।

आज संसद में कलाकारों की बाढ़-सी आ गई है। धर्मेन्द्र, हेमामालिनी, राजबब्बर, गोविन्दा, जयाप्रदा, विनोद खन्ना, राजेश खन्ना, जया बच्चन, शत्रुघ्न सिन्हा, शबाना आजमी—सब डटे हैं संसद में। वे लोग संसद में कौन-सा योगदान दे रहे हैं, यह तो इन्हें घुसाने वाले अधिकारी ही जानें, परन्तु राष्ट्र इस घटिया प्रवृत्ति से कलंकित अवश्य हो रहा है। क्योंकि आज भी भारतवर्ष में चरित्र के धनी, श्रेष्ठ साहित्यकारों, कवियों, चिन्तकों, राष्ट्रभक्तों एवं समाजसेवकों की कमी नहीं है। परन्तु न उनका नाम प्रस्तावित होता है और न वे प्रतिष्ठित हो पाते हैं संसद में। फलत: जिस सर्वोच्च राष्ट्रीय गौरव मञ्च पर कभी दद्दा मैथिलीशरण गुप्त एवं दिनकर जैसे कवि प्रतिष्ठित थे, आज वहीं विद्वत्ता-पाण्डित्य का कोई नाम लेवा तक नहीं है।

इससे बड़ी अवमानना संसद की और क्या हो सकती है कि एक सांसद कभी उसके अधिवेशन में उपस्थित ही नहीं होता? 'पद्मश्री' जैसे स्पृहणीय सम्मान को दुलत्ती मारने वाले खिलाड़ी, दिल्ली में ही रहते हुए अन्य काम तो करते हैं, परन्तु सम्मान लेने नहीं आते? इसका सीधा अर्थ है कि वे मूर्ख हैं, अर्थ पिशाच हैं। वे सचमुच 'पद्मश्री' जैसे सम्मान का अर्थ ही नहीं समझते, और जो सम्मान का अर्थ ही नहीं जानता उसे सम्मान देने का औचित्य क्या है? वह तो अपनी अपात्रता स्वयं सिद्ध कर रहा है!

अब बाबू जसवन्त सिंह की लीला देखिये! कायदे आजम जिन्ना पर किताब लिखकर स्वदेश में फजीहत कराई तो पाकिस्तान चले गये। वहाँ अपनी प्रशंसा में गाई जाती कौवालियों का आनन्द ले रहे हैं। एक बार तो सोचा होता कि किसी पाकिस्तानी ने तो पं० मदनमोहन मालवीय पर, पटेल पर, गणेशशंकर विद्यार्थी पर किताब नहीं लिखी। आपमें ही यह जिन्ना-भक्ति कहाँ से पनप गई? यदि प्रशंसा की इतनी ही भूख है तो उन्हें लाहौर में ही बस जाना चाहिये।

(क्रमश:)

हिन्दी : लिंग्वा फ्रांका के रूप में विकसित हो

—शम्भूनाथ शुक्ल

केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल का हिन्दी को एक, 'लिंग्वा फ्रांका' यानी सम्पर्क भाषा के तौर पर विकसित करने का सुझाव स्वागतयोग्य है। अपने देश में हिन्दी 'लिंग्वा फ्रांका' के तौर पर करीब डेढ़ शताब्दी से इस्तेमाल हो रही है, लेकिन आजादी के बाद बनी सरकारों ने इसे मूर्त रूप इसलिए नहीं प्रदान किया, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें दक्षिण के राज्यों के नाराज हो जाने का खतरा दिखा था। हालांकि इस दौरान पूरे देश के बाजारों में हिन्दी सम्पर्क भाषा के तौर पर इस्तेमाल होती रही। विभिन्न प्रान्तों ने हिन्दी को अपनी-अपनी सुविधा से इस्तेमाल किया, इसीलिए कोलकाता, हैदराबाद, चेन्नई, बंगलुरू और मुम्बई में हिन्दी की अलग-अलग ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं। हिन्दी को जब तक हिन्दी इलाके की मातृभाषा के तौर पर सीमित रखेंगे, उसका बाजार विकसित नहीं हो पाएगा। इसलिए इस ग्रन्थि को निकालना होगा कि हिन्दी सिर्फ हिन्दी पट्टी में रहने वालों की भाषा है।

हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में चलाने की पहल किसी हिन्दी इलाके से नहीं, बंगाल से हुई थी। राजा राममोहन राय ने हिन्दी में अखबार निकालने के लिए लोगों को प्रेरित किया। पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने राय मोशाय से प्रेरित होकर ही 1826 में **उदंत मार्तंड** निकाला। यह भी कहा जाता है कि स्वामी दयानंद सरस्वती जब कोलकाता गए, तो वहाँ केशव चंद्र सेन ने उनको सुना। स्वामीजी गुजराती भाषी थे और उनका सारा अध्ययन संस्कृत में हुआ था, इसलिए वह तब संस्कृत में ही बोलते थे। केशव चंद्र सेन ने उन्हें सुझाव दिया कि आप संस्कृत के बजाय हिन्दी बोलें, तो ज्यादा लोग आपसे जुड़ेंगे। इसके बाद दूसरे गुजराती महात्मा गाँधी ने आजादी की लड़ाई के दौरान हिन्दी को हथियार के रूप में इस्तेमाल किया। मोतीलाल नेहरू के दबाव में उन्होंने हिन्दुस्तानी पर जोर दिया। लेकिन हिन्दुस्तानी का कोई स्पष्ट खाका किसी के दिमाग में नहीं था। अगर हिन्दी का सरलीकरण ही हिन्दुस्तानी है, तो एक संकट यह था कि संस्कृत शब्दों का ज्यादा प्रयोग दिल्ली में खटकता था, तो फारसी के शब्दों की भरमार बंगाल या दक्षिण के लोग नहीं समझ पाते थे। इसलिए हिन्दुस्तानी चल नहीं पाई।

एक ऐसे देश में, जहाँ के बारे में कहा जाता हो कि **तीन कोस पर पानी बदले चार कोस पर बानी,** वहाँ एक सम्पर्क भाषा का होना बहुत जरूरी है। बादशाह फर्रुखशियर के वक्त में दिल्ली के आसपास खासकर मेरठ की पछैहां खड़ी बोली में फारसी के शब्दों को मिलाकर उर्दू के नाम से एक सम्पर्क भाषा विकसित करने की कोशिश जरूर की गई, पर उसे भी पूरे देश में स्वीकार्यता नहीं मिली। इसका कारण था उर्दू में उन शब्दों की बहुलता, जो अरबी और फारसी से आयात हुए थे। दूसरे उर्दू का अरबी और फारसी लिपि में लिखा जाना भी लोगों को नहीं पचा। अरबी में ट, ड, ढ जैसे हार्ड सेलेबल अक्षर नहीं हैं जबकि हिन्दुस्तान में इनके बिना काम नहीं चल सकता था इसलिए फारसी लिपि को लेना पड़ा। इसमें 'ज' के इतने ज्यादा रूप हैं कि फारसी पढ़ा-लिखा व्यक्ति ही उर्दू में पारंगत हो सकता था। इसलिए दिल्ली के बाहर के मुसलमान और हिन्दू दोनों इसे स्वीकार नहीं कर सके। वली दक्कनी के प्रशंसक मानते हैं कि उर्दू का विकास दक्कन से हुआ, लेकिन जरा वली का एक शेर देखिए : 'आकबत का होएगी मालूम नीं, दिल हुआ मुब्तला दीदार का'।

अब दिल्ली के आसपास की ठेठ उर्दू का रूप देखिए, जहाँ व्याकरण में क्रिया पद ही लिंग का निर्धारण करते हैं। ऐसे में वली की उर्दू से अलग यहाँ की उर्दू बनी, जो साहित्यिक तो थी, मगर स्थानीय बोलियों और रीति-रिवाजों से सर्वथा अनजान। पछैहां खड़ी बोली में अरबी-फारसी की बहुलता से उर्दू बनी, तो संस्कृत के तद्भव शब्दों से हिन्दी का चलन हुआ। दोनों के व्याकरण, वाक्य विन्यास व शैली में बदलाव नहीं हुआ।

उर्दू में फारसी शब्दों की बहुलता और मुगल व अवध के दरबार में इसके बढ़ते चलन के कारण यह जल्द ही मुसलमानों व कायस्थों में जरूर लोकप्रिय हो गई, लेकिन पूरे देश की 'लिंग्वा फ्रांका' नहीं बन पाई। उर्दू के चलन के पूर्व मुसलिम कवियों ने क्षेत्रीय भाषाओं व बोलियों में खूब लिखा है। अमीर खुसरो, मलिक मुहम्मद जायसी, रसखान तथा अब्दुर्रहीम खानखाना ने अवधी और ब्रजभाषा में ढेरों कवित्त लिखे हैं। खुसरो ने दिल्ली के आसपास बोली जाने वाली शौरसेनी अपभ्रंश का खूब इस्तेमाल किया। जायसी ने अपना सारा सूफी साहित्य अवधी में लिखा है। रसखान पर भक्त कवियों की छाप थी।

अब्दुर्रहीम खानखाना बादशाह अकबर के दरबार के नवरत्नों में से थे। उन्होंने सबसे पहले संस्कृत और फारसी को मिलाने की कोशिश की। संस्कृत और फारसी को मिलाकर उन्होंने **मदनाष्टक** नाम से कुछ पद लिखे। लेकिन उनका यह प्रयास लोकमानस में बहुत सफल नहीं हुआ। उन्होंने मदनाष्टक में लिखा है : **शरद निशि निशीथे, चांद की रोशनाई / सघन वन निकुंजे, कान्ह वंशी बजाई / रति पति सुत निद्रा, सइयां छोड़ भागीं / मदन शिरिष भूया, क्या बला आन लागी।**

रहीम के इन पदों में आधा हिस्सा संस्कृत तथा आधा हिस्सा फारसी से बनाया गया है। इन कवियों ने अपने वही रूपक और मिथक इस्तेमाल किए, जो वहाँ परम्परा से चले आ रहे थे। इसलिए खुसरो, जायसी, रसखान और रहीम तक मुसलिम कवियों में कहीं भी बेगानापन नजर नहीं आया। उनका सूफी भाव यहाँ के भक्ति भाव से जोड़कर देखा गया। ये उसी परम्परा से जुड़े थे, जिनसे हिन्दी अपने को जोड़ती है। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि उर्दू साहित्य में खुसरो और जायसी को तो बढ़ाया जाता है, लेकिन रसखान और रहीम वहाँ से गायब हैं।

हिन्दी को आजादी के बाद भले ही राजनीतिक कारणों से दबाया गया हो, लेकिन हिन्दीभाषी मध्यवर्ग के फैलाव ने इसको बाजार में बनाए रखा। इसकी मजबूती का आधार इसका सम्पूर्ण भारतीय कलेवर रहा। प्रेमचंद साहित्य के अध्येता डॉ० भरत सिंह के मुताबिक, उर्दू साहित्य की थाती को समेटे हिन्दी का नागरी लिपि में लिखा जाना भी इसके लिए काफी महत्त्वपूर्ण है। उर्दू से करीबी होने का लाभ यह मिला कि प्रेमचंद जैसा साहित्यकार हिन्दी को मिल गया, जिसने 1915 के बाद में हिन्दी में यह कहते हुए लिखना शुरू किया—'अब हिन्दी लिखने में मश्क कर रहा हूँ। उर्दू में अब गुजर नहीं है। यह मालूम होता है कि बालमुकुंद मरहूम की तरह मैं भी हिन्दी लिखने में जिन्दगी सर्फ कर दूँगा'।

(*'अमर उजाला' से साभार*)

पृष्ठ 1 का शेष

जब जिल्द साज़ के कठिन पाश में पड़कर,
नूतनता पाता मेरा जीर्ण कलेवर,
तब मैं प्रफुल्ल, हर्षित अतिशय होती हूँ,
जन सेवा के स्वप्निल जग में खोती हूँ।

नारी कब रखती है सँभाल कर तन को,
परहित में रखती निरत सदा निज मन को।
मैं ईश्वर हूँ मानव का यदि हो चिन्तन,
है विषय-विषय का भेद बनूँ मैं बंधन।

मैं चिकित्सकों की चाह वकीलों का यश,
अध्यापक की संगिनी छात्र हित सर्वस।
मुझसे घोषित हैं आजीविका अनेकों,
है कौन कहो विद्वान न सम्बन्धित हो?

पुस्तक पिशाच ही मेरा हरण करेंगे,
वैधानिकता से पंडित वरण करेंगे।

गोपेशशरण शर्मा 'आतुर'
भरतपुर (राजस्थान)

क्या सचमुच घट रहे हैं साहित्य के पाठक ?

—प्रयाग शुक्ल

साहित्य के पाठक क्या वास्तव में कम हो रहे हैं, जैसी कि आम धारणा बनी हुई है? कहना कठिन है, क्योंकि इस बीच चीजें तेजी से बदली हैं और पहले जिस तरह कई बातों का अनुमान हम लगा पाते थे, अब उस तरह नहीं लगा पाते हैं। साहित्य के पाठकों वाले सवाल पर इसीलिए कुछ ठहरकर और शायद 'नई' तरह सोचने की जरूरत है।

यह सही है कि, अब क्या छोटे और क्या मझोले शहर, सभी मॉल और चमकते बाजारों वाले बन गए हैं। बाहर खाने-पीने का चलन भी बहुत बढ़ा है और आम तौर पर, साहित्यिक पत्रिकाओं-पुस्तकों की दुकानें और उन्हें बेचने वाले स्टॉल नजर नहीं आते। आते भी हैं तो अंग्रेजी पुस्तकों-पत्रिकाओं के ही अधिक। पर इससे यह अनुमान लगा लेना कि अच्छे साहित्य के पाठक नहीं रहे, या कम हो गए हैं, भ्रामक ही कहा जाएगा। जब किसी शहर में कोई पुस्तक मेला लगता है, तो भीड़ उमड़ती है। प्रकाशन-संस्थाएँ भी लगातार बढ़ रही हैं, हारपर कॉलिन्स व पेंगुइन बुक्स जैसे प्रकाशक भी अब हिन्दी में किताबें छाप रहे हैं।

फिर जो युवा पीढ़ी अंग्रेजी साहित्य पढ़ रही है, क्या उसे हम 'साहित्य के पाठकों' में शुमार नहीं करना चाहेंगे? स्वयं भारतीय साहित्य की क्लासिक या महत्त्वपूर्ण रचनाएँ, अब अंग्रेजी में एक बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। और रवीन्द्रनाथ, प्रेमचंद से लेकर मोहन राकेश और निर्मल वर्मा जैसे रचनाकारों की भी कई कृतियाँ अंग्रेजी में मिल जाएँगी और वे भी पढ़ी जा रही हैं। बांग्ला के सुनील गंगोपाध्याय, मलयालम के एम०टी० वासुदेवन नायर, मराठी के भालचंद्र नेमाड़े जैसे आधुनिक लेखकों की कृतियाँ अंग्रेजी, हिन्दी सहित कई अन्य भारतीय भाषाओं में भी पढ़ी जा रही हैं। हो सकता है कि युवा पीढ़ी में से बहुतेरे इन लेखकों को अनुवाद में पढ़ रहे हों, पर वे पढ़े तो जा रहे हैं। यह भी न भूलें कि द्विभाषी पाठकों की तादाद तेजी से बढ़ रही है। कोई बांग्लाभाषी युवा अब हिन्दी/अंग्रेजी में भी चीजें पढ़ता है। उसी तरह आपको मराठी, कन्नड़, उड़िया आदि में भी ऐसे पाठक मिल जाएँगे, जो अपनी मातृभाषा के अलावा किसी दूसरी भाषा में भी साहित्य पढ़ रहे हैं।

पिछले दिनों देहरादून में केन्द्रीय साहित्य अकादेमी (दिल्ली) के सहयोग से पूरे एक दिन का रचना-पाठ आयोजित हुआ था। इसमें स्थानीय लेखकों-कवियों में से विद्यासागर नौटियाल, लीलाधर मंडलोई, बुद्धिनाथ मिश्र जैसे वरिष्ठ लेखक-कवि तो थे ही, युवा पीढ़ी से अल्पना मिश्र, विजय गौड़ जैसे रचनाकार भी थे। बाहर से विश्वनाथप्रसाद तिवारी, गिरधर राठी, हेमंत कुकरेती, यतींद्र मिश्र समेत कई लेखक-कवि भी देरहादून आए थे। सुबह दस बजे से शाम सात बजे तक चार सत्रों में कविता-कथा पाठ का जो सिलसिला चला, उसमें हर समय सौ से भी अधिक श्रोता/पाठक मौजूद रहते थे। इसने मुझे निश्चय ही उत्साहित किया। और मैं यह सोचने लगा कि अगर समय-समय पर ऐसे आयोजन विभिन्न नगरों में होते रहें, तो इनसे भी पाठक/श्रोताओं की गतिविधियों को गति मिलेगी।

हम एक बदली हुई और बदलती हुई दुनिया में रह रहे हैं। इसी वर्ष अप्रैल महीने में मुझे लंदन पुस्तक मेले में भाग लेने का अवसर मिला था। वहाँ आयोजित परिसंवादों/रचना पाठों में युवा श्रोताओं की एक अच्छी-खासी उपस्थिति रहती थी। इनमें से कई भारतीय छात्र-छात्राएँ भी थे (बांग्लाभाषी, तमिलभाषी, हिन्दीभाषी), जो वहाँ के विश्वविद्यालयों में अध्ययन या शोध के लिए पहुँचे हैं। परिसंवादों के दौरान लेखकों-कवियों से किए गए उनके प्रश्न यह बता रहे थे कि साहित्यिक कृतियों और विमर्शों में उनकी दिलचस्पी गहरी है। तो प्रायः सर्वत्र यह दिखाई पड़ रहा है कि नई पीढ़ी साहित्य से विमुख नहीं हुई है। हाँ, उनकी पठन रुचियाँ कुछ बदली हुई हो सकती हैं। मसलन, कविता-कहानी-उपन्यास की जगह आज प्रायः सभी पीढ़ियों के पाठक जीवनियों, आत्मकथाओं, यात्रा-वृत्तान्तों, संस्मरणों और विमर्श मूलक किताबों में रुचि ले रहे हैं।

अनुवाद की दुनिया भी निरन्तर बड़ी हो रही है। फैल रही है। टर्की के नोबेल पुरस्कार विजेता लेखक ओरहान पामुक की कृतियों के अनुवाद विश्व की चालीस से अधिक भाषाओं में हो चुके हैं। अनुवाद में मुद्रित उनकी कृतियों की संख्या तुर्की में उपलब्ध उनकी कृतियों की संख्या से कई गुना ज्यादा है। फिर एक बहुत बड़ी दुनिया इंटरनेट पर उपलब्ध साहित्य की वेबसाइट्स और ब्लॉग्स की है। फिलहाल 'हाथों में थामी हुई पुस्तकों-पत्र-पत्रिकाओं' को ही ध्यान में रखें, तो पाएँगे कि विभिन्न देशों-प्रदेशों में, स्टेशन-हवाई अड्डों से लेकर रेस्तरां-होटलों-पर्यटन स्थलों में उनके जितने 'दर्शन' पहले होते थे, आज उससे अधिक हो रहे हैं। इससे इतना भरोसा तो बढ़ता ही है कि साहित्य के लिए पर्याप्त स्पेस है।

अपनी भाषा के साहित्य के सामाजिक स्पेस की बात करें, तो भला इससे कौन इनकार करेगा कि हमारी नजर अपनी भाषा के सुरुचिपूर्ण प्रकाशनों, अच्छी पुस्तक दुकानों, अच्छे पुस्तकालयों एवं स्तरीय साहित्यिक आयोजनों पर भी केन्द्रित होनी चाहिए, इस परख व पहचान के साथ कि इनकी दशा-दिशा क्या है? कैसे हम इन सभी चीजों को और अधिक गतिशील कर सकते हैं। साहित्य की भूख किसी और तरफ से मिटने वाली नहीं है। वह मनुष्य-समाज के साथ हमेशा के लिए नत्थी हो गई है।

(*'अमर उजाला' से साभार*)

तकनीकी हिन्दी : कोश, पुस्तकें, रचनाएँ

प्रतिवर्ष सितम्बर के महीने में राजभाषा हिन्दी-दिवस के नाम पर जो रस्म अदायगी होती है उससे अलग हटकर कुछ लोगों ने अपने-अपने क्षेत्र में गम्भीर शुरुआत की है। निश्चित ही ये हिन्दी-साधक भविष्य की इबारत लिख रहे हैं।

हिन्दी प्रेमियों के लिए यह खबर किसी बड़ी खुशखबरी से कम नहीं है। त्रिभाषा सूत्र के आधार पर 35 तकनीकी विषयों की शब्दावली तैयार कर ली गई है। इससे हिन्दी भाषा में तकनीकी शिक्षा, शोध तथा पुस्तक लेखन की बहुलता के द्वार खुलेंगे। प्राथमिक चरण में माध्यमिक स्कूलों में हिन्दी माध्यम के विज्ञान की किताबों में तकनीकी शब्दावलियों के मानकीकरण का काम शुरू कर दिया गया है।

आमतौर पर वैज्ञानिक या विज्ञान प्राध्यापक इस बात की दलील देते हैं कि हिन्दी में विज्ञान की शब्दावलियाँ ही उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए मिश्रित (अंग्रेजी) भाषा में तो विज्ञान की किताब लिखी जा सकती है लेकिन, माध्यम पूर्ण रूप से हिन्दी नहीं हो सकता। विज्ञान की पुस्तकों के लेखकों एवं अनुवादकों की सहायता के लिए तकनीकी शब्दवली आयोग के स्तर पर आठ लाख शब्दों का भण्डार संग्रहित किया गया है। देश की सभी 22 क्षेत्रीय भाषाओं में उनके अर्थ निकाल लिए गए हैं और फिलहाल त्रिभाषा सूत्र (हिन्दी, अंग्रेजी व क्षेत्रीय भाषा) पर उड़िया, बोर्डो, तेलुगु, मराठी व कोंकड़ी में तकनीकी शब्दावली तैयार की जा रही है।

अब तक वनस्पति, पर्यावरण, कृषि वानिकी, रसायन, भौतिकी, अर्थशास्त्र व जैव प्रौद्योगिकी आदि 35 विषयों में शब्दकोश तैयार कर लिए गए हैं। एक-एक शब्दकोश में करीब सात से लेकर 10 हजार तकनीकी शब्द शामिल हैं। इन विषयों में त्रिभाषा फार्मूले पर परिभाषा कोश भी तैयार किया जा रहा है। वे बताते हैं कि माध्यमिक स्तर पर एनसीआरटी, सीबीएसई व माध्यमिक बोर्ड हिन्दी माध्यम में विज्ञान की पुस्तकें लिखवा रहे हैं। आयोग ने 11वीं व 12वीं की जीव विज्ञान की पुस्तक के साढ़े सात हजार तकनीकी व वैज्ञानिक शब्दों का मानकीकरण किया है। उच्च शिक्षा के लिए भी शब्दकोश व परिभाषा कोश तैयार किए जा रहे हैं।

शिक्षा का माध्यम बच्चों की मातृभाषा

—मुचकुन्द दूबे

छह से 14 साल के बच्चों के लिए अनिवार्य और नि:शुल्क शिक्षा के अधिकार का विधेयक संसद के दोनों सदनों ने पारित कर दिया है। इस विधेयक से किस हद तक शिक्षा का अधिकार मिलेगा, इसके पक्ष और विपक्ष में काफी बहस हो चुकी है। परन्तु असली बात तो यह है कि इस विधेयक द्वारा शिक्षा में आमूल परिवर्तन लाने का जो देश को मौका मिला था, उसको हम गँवा बैठे हैं।

स्कूली शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने के सिलसिले में जो कुछ प्रश्न बार-बार उठाए जाते हैं वे हैं—शिक्षकों की अनुपस्थिति, अभिभावकों की उदासीनता, सही पाठ्यक्रम का अभाव, अध्यापन में खामियाँ इत्यादि। परन्तु इन समस्याओं को अलग-अलग रूप में देखा नहीं जा सकता, क्योंकि इनकी जड़ें सारी व्यवस्था में फैली हैं। इसलिए व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाना जरूरी है। इसके लिए हमें स्कूली शिक्षा व्यवस्था की मूल समस्याओं पर गौर करना होगा।

पहली मूल समस्या है प्रवेश की कमी। आजादी के 62 साल बाद भी हमारे देश में करोड़ों बच्चे पढ़ाई से वंचित रह जाते हैं। बिहार समान स्कूल प्रणाली आयोग (2007) के अनुमान के मुताबिक उस राज्य में स्कूल जाने की उम्र के 50 प्रतिशत यानी 3 करोड़ में से डेढ़ करोड़ बच्चों के भाग्य में स्कूल जाना नहीं लिखा है। पूरे देश में यह संख्या 30 प्रतिशत से कम नहीं होगी। दाखिले का अनुपात प्रवेश का सही सूचक नहीं हो सकता। क्योंकि दाखिल बच्चों में से अधिकांश विभिन्न कारणों से बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। आधुनिकतम सरकारी आँकड़ों के मुताबिक कक्षा 10 तक पहुँचते-पहुँचते 61 प्रतिशत बच्चों ने पढ़ाई छोड़ दी थी। बिहार में यह अनुपात 75 प्रतिशत था। इनमें से दलित और जनजाति परिवार के बच्चों का अनुपात 70 (भारत) और 90 (बिहार) प्रतिशत था। प्रवेश की समस्या के समाधान के लिए सबसे पहला कार्य होना चाहिए—अतिरिक्त स्कूलों का निर्माण, अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति और अतिरिक्त शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों का निर्माण। बिहार समान स्कूल प्रणाली आयोग ने अनुमान लगाया था कि 5 से 9 साल तक सभी बच्चों को स्कूल में प्रवेश कराने के लिए 64 हजार अतिरिक्त स्कूल बनाने होंगे और 10 लाख अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति करनी होगी। शिक्षा अधिकार विधेयक में प्रारम्भिक शिक्षा सबको उपलब्ध कराने के लिए कोई भी समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है और न ही अतिरिक्त स्कूल बनाने और अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति की योजना बनाई गई है।

शिक्षा की दूसरी मूल समस्या है, इसकी अति निम्न गुणवत्ता। इसे बढ़ाने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उपाय है न्यूनतम मानकों का निर्धारण कर उन्हें सभी स्कूलों में लागू करना। शिक्षा अधिकार विधेयक की अनुसूची में कुछ मानक निर्धारित किए गए हैं। परन्तु ये नितान्त अपर्याप्त हैं। अनेक अत्यावश्यक मानकों का इसमें जिक्र ही नही है जैसे—जन आबादी से स्कूल की दूरी, प्रति स्कूल और प्रति क्लास में छात्रों की संख्या, कक्षाओं में फर्नीचर, पाठ्यउपकरण, प्रयोगशाला का स्तर, शिक्षकों की योग्यता, प्रशिक्षण, वेतनमान एवं सेवा की शर्तें इत्यादि। कुछ मानकों का जिक्र तो है पर उनका स्पष्ट उल्लेख करने के बदले कहा गया है, 'जैसा सरकार निर्धारित करे।' इसका मतलब यह भी हो सकता है कि अयोग्य शिक्षकों (पैरा टीचर्स) की नियुक्ति और बहुकक्षा पढ़ाई का मौजूदा सिलसिला जारी रहेगा। फिर तो गुणवत्ता की बात करना ही फिजूल है।

प्रवेश एवं गुणवत्ता, इन दोनों समस्याओं का असली कारण है वित्त का अभाव। शिक्षा अधिकार विधेयक से संलग्न वित्तीय स्मरण-पत्र में कहा गया है, 'विधेयक को अमल में लाने के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों का परिमाण निर्धारित करना फिलहाल संभव नहीं है।' यह कथन गलत है। पिछले 10 वर्षों में भारत के हर बच्चे को नि:शुल्क प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करने में जो खर्च होगा उसका कई बार अनुमान लगाया जा चुका है। 1999 में तापस मजूमदार समिति ने बताया कि इसके लिए अगले 10 वर्षों में 1,37,000 करोड़ अतिरिक्त रकम लगेगी। 2005 में शिक्षा-परामर्श बोर्ड (केब) के एक विशेषज्ञ दल ने अनुमान लगाया था कि इस पर 6 साल तक प्रतिवर्ष न्यूनतम 53,500 करोड़ और अधिकतम 73 हजार करोड़ रुपए का अतिरिक्त व्यय होगा। फिलहाल प्रारम्भिक शिक्षा के लिए सर्वशिक्षा अभियान के माध्यम से धनराशि उपलब्ध कराई जाती है। दसवीं पंचवर्षीय योजना की तुलना में करीब दोगुनी वृद्धि के बाद भी ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में सर्वशिक्षा अभियान के लिए प्रतिवर्ष करीब 30,000 करोड़ रुपए का प्रावधान है। इस रकम से न तो देश के सभी बच्चों को स्कूल में प्रवेश दिलाया जा सकता है और न गुणवत्ता में विशेष परिवर्तन लाया जा सकता है।

हमारी **स्कूली शिक्षा व्यवस्था की तीसरी मूल समस्या है, इसमें व्याप्त असमानता और भेदभाव।** देश के सामाजिक वर्गीकरण के साथ-साथ हमारे यहाँ स्कूलों का भी वर्गीकरण है, जिसके मुताबिक धनी और विशिष्ट वर्ग के बच्चे ज्यादा फीस वाले अच्छे स्कूलों मे पढ़ते हैं, और गरीब व निम्न वर्ग के बच्चे जिनकी संख्या कुल स्कूली छात्रों का करीब 80 प्रतिशत है। इसके चलते देश का सामाजिक विभाजन और भी बढ़ता जा रहा है। सभी स्कूलों में न्यूनतम मानक लागू करना न केवल शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ा सकता है, बल्कि शिक्षा व्यवस्था में मौजूद भेदभाव को मिटाने में भी मदद कर सकता है। भेदभाव मिटाने का दूसरा उपाय है 'पड़ोस के स्कूल के सिद्धान्त' को लागू करना जिसके मुताबिक हर स्कूल को उसके लिए निर्धारित पोषक क्षेत्र अथवा पड़ोस के सभी बच्चों को दाखिला देना होगा। इसका भी शिक्षाधिकार विधेयक में कोई प्रावधान नहीं है। बल्कि, स्कूलों के वर्तमान वर्गीकरण को कायम रखने की व्यवस्था है।

शिक्षा अधिकार कानून के द्वारा भारत सरकार एक ऐसी देशव्यापी भाषा-नीति को अमल में ला सकती थी जिसके द्वारा बच्चों की प्रतिभा के विकास के साथ-साथ देश को एकता के सूत्र में बाँधा जा सकता था। किन्तु हमने यह मौका भी खो दिया। विधेयक में कोई भी भाषा नीति शामिल नहीं की गई है। केवल कहा गया है, 'शिक्षा का माध्यम यथासम्भव बच्चों की मातृभाषा होगी।' मातृभाषा की परिभाषा नहीं दी गई है। 'यथासम्भव' शब्द का प्रयोग कर अंग्रेजी माध्यम से छोटे बच्चों को भी शिक्षा देने का मार्ग खुला रखा गया है। भाषा अध्यापन के सम्बन्ध में भी विधेयक मौन है। विधेयक के माध्यम से हम कोठारी आयोग द्वारा अनुशंसित और राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शामिल 3-भाषाई फार्मूले को कार्यान्वित करने के लिए नए सिरे से प्रयास कर सकते थे। पर यह भी इस विधेयक से नहीं हो सका।

अध्येताओं, पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक
(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)
वाराणसी - 221 001 (उ०प्र०)
Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082
E-mail : vvp@vsnl.com & sales@vvpbooks.com
Website : www.vvpbooks.com

कला का प्रयोजन

कला का प्रयोजन क्या है, इस पर शुरू से आजतक इतने परस्पर विरोधी विचार सामने आते रहे हैं कि कहा नहीं जा सकता। नैकेमुनिर्यस्य मतिर्नभिन्नाः। इस विरोधी विचार-शृंखला का क्रम कभी टूट भी सकेगा, इसकी भी संभावना नहीं दिखायी देती। कला का अपना जीवन-दर्शन, स्वतंत्र प्राण-धर्म ही इन विरोधी विचारों का मूल कारण है। कला जीवन के कन्धे पर अलग से लदी हुई ऐसी कोई गठरी नहीं है, जो यात्रा की किसी सीमा पर उतार फेंक दी जा सके—वह जीवन-यात्रा की सहगामिनी है। मानव की इस लम्बी तीर्थयात्रा में वह पथ का पाथेय और गति का एक अंग बनकर ही चलती आयी है, चली जा रही है। उसके रूप का जो प्रकाश वर्तमान या सामयिकता में समुद्भासित होता है, वह उसका खंड रूप है। वर्तमान उसके अतीत और भविष्यत् के बीच का एक योजक सेतु है—तीनों काल के अनंत प्रवाह में उसके रूप की जो समग्रता है, उसके प्राण-धर्म की जो परम्परा है, उसकी धारणा करने जैसी वह समग्र और सुदूरप्रसारी दृष्टि सबको और सब समय सहज नहीं होती। यह दृष्टि वह नहीं है, जिसे हम डिसक्रिमिनेशन अथवा ऑवज़र्वेशन कहते हैं। यह विज़न् है, सर्वदर्शी दृष्टि, जो वस्तु-समूह के आभ्यंतरीण सुषमा का आविष्कार करती है। जिसे 'दि हीरो ऐज़ पोएट' में कार्लाइल ने—'दि सीइंग आइ!', कहा है और कहा है, 'इट इज़ दिस् दैट डिसक्लोज़ेज़ दि इनर हारमोनी ऑफ थिंगस्'। अभिनव गुप्त ने जिसे साक्षात्कार-स्वरूप कहा है, उसे देखने की दृष्टि। व्यक्तिजीवन और विश्वजीवन का एक निविड़ योग है, तीनों काल और सारी मनुष्य एवं जीवसत्ता के साथ मानवात्मा का जो एकात्मबोध है, अखण्डता बोध है, वह दृष्टि उसी की परिचायिका है। रवीन्द्रनाथ ने जिसका परिचय यों दिया है—

भूत भविष्यत् लये ये विराट् अखण्ड विराजे से मानव माझे
निभृते देखिब आजि ए आमिरे सर्वत्र गामीरे।

अर्थात् भूत, भविष्यत् के समन्वय में जो विराट् और अखण्ड रूप राजित है, उस मनुष्य में मैं उस 'मैं' को, उस सर्वत्रगामी को एकांत में देखूँगा।

इसलिए प्रत्येक युग कला-विषयक ऐसे प्रश्नों की मीमांसा अपनी समस्याओं, अपनी मान्यताओं के अनुरूप ढूँढ़ा करता है। व्यक्तिगत रुचि, ऐकांतिक दृष्टि के तराजू पर जब उसकी तौल होती है, तो स्वभावतया ही उसका मूल्य और मान जुदा-जुदा निर्धारित होता है। यह भी स्वभाविक है कि ऐसे में उसके सच्चे स्वरूप और प्रकृत प्राण-धर्म की पूरी पहचान भी नहीं होती। रैफैल ने कला-विषयक ऐसे मतभेद के लिए एक मजे की बात बतायी है। लिखा है, सत्य की खोज में जब लोग मंदिर में हाजिर हुए तो पुजारिन ने उन्हें एक तरह की मदिरा पीने के लिए दी। वह मदिरा किसी को मीठी, किसी को कड़वी और किसी को बड़ी तीखी लगी। मदिरा एक ही थी, किन्तु व्यक्ति के हिसाब से उसका स्वाद अलग-अलग हो गया। ठीक इसी तरह से कला की किसी भी वस्तु का मूल्य आँकने में मतभेद पाया जाता है।

पं० हंसकुमार तिवारी की 91वीं जयन्ती

हिन्दी और बंगला के सेतु, सुख्यात कवि एवं आलोचक पं० हंसकुमार तिवारी की 91वीं जयन्ती बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभागार में 18 अगस्त, 2009 को मनायी गयी। सम्मेलन के अध्यक्ष डॉ० जगदीश पाण्डेय ने जयन्ती समारोह की अध्यक्षता की।

इस अवसर पर पं० हंसकुमार की कला सम्बन्धी अवधारणा पर एक संगोष्ठी भी आयोजित की गयी जिसमें विद्वान वक्ताओं ने कला-अवधारणा के विभिन्न पहलुओं पर अपने-अपने विचार प्रकट किये।

मुख्य वक्ता कवि कमला प्रसाद ने तिवारीजी की कला चेतना सम्बन्धी उक्तियों का उदाहरण देते हुए कहा कि कला का सम्बन्ध मन से है। मन हमारे जीवन को संस्कारित करने में योगदान देता है। तिवारीजी लिखित यह पुस्तक एक अनूठी पुस्तक है। कला सम्बन्धी लिखी पुस्तकों में यह पुस्तक कीर्तिमान है जिसकी रचना लेखक ने लगभग अट्ठारह वर्ष की आयु में ही कर डाली थी।

संगोष्ठी में अपने विचार व्यक्त करते हुए आकाशवाणी, वाराणसी के पूर्व निदेशक विश्वनाथ पाण्डेय ने कहा कि तिवारी जी सदा अपने समय के साथ जिये। उनके द्वारा लिखित गद्य और पद्य दोनों इसके प्रमाण हैं। उनकी कविताओं में कला एवं सौन्दर्य बोध की चर्चा भी श्री पाण्डेय ने की और कहा कि इस विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की जानी चाहिये ताकि कला विषय पर अद्यतन विचार पाठकों तक पहुँच सकें।

रैफैल ने जो बात कला-कृति के लिए कही है, वही बात कला के लिए भी है। मतविशेष के अनुसार मूल्यांकन की जो पद्धति है, उससे अन्य अनेक लाभ चाहे होते हों, एक बहुत बड़ा नुकसान यह होता है कि उसके प्राण-धर्म की उपेक्षा, उसके पूर्ण और सच्चे स्वरूप की अवमानना होती है। कला का स्वर चिरविद्रोही होता है, आँगन के छोटे दायरे में बँधा हुआ एक टुकड़ा आकाश में ही वह अपनी गूँज नहीं रखती, उसके लिए अनन्त आकाश है। किसी खिंची हुई रेखा के निर्धारित हलके में, बँधी हुई लीक पर न तो वह आबद्ध रह सकती है, न चल सकती है। अपनी गति की वह स्वयं नियामिका है, अपने गंतव्य की खुद ही निर्णायिका भी। वह एक सृष्टि है। सृष्टि मतवाद पर नहीं बनती, मतवाद सृष्टि के अनुसार गढ़ उठते हैं। सिद्धांत को सामने रखकर जो सृष्टि बनती भी होगी, वह मुक्त आत्मा के जीवनानंद से रहित किसी कैदी के अवसादमय दुर्वह जीवन की पंगु और तेजहीन छवि ही होगी।.....

विस्तृत अध्ययन हेतु पढ़ें—

हंसकुमार तिवारी

जन्म
15 अगस्त 1918 ई०
निधन
27 सितम्बर 1980 ई०

पत्रकार, राजभाषा अधिकारी अनुवादक, सम्पादक निदेशक।

विभिन्न पदों पर कार्यरत रहते हुए पं० गोपीनाथ कविराज की 5 पुस्तकों तथा बंगला के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद किया। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के निदेशक पद से आपने अनेक विद्वानों की विशिष्ट कृतियों का प्रकाशन किया।

निबन्ध, कविता, कहानी, उपन्यास, बाल साहित्य तथा विविध विषयों पर आपकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित हुईं।

विशिष्ट साहित्य सेवा के लिए बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश शासन ने मौलिक एवं श्रेष्ठ लेखन के लिए सम्मानित तथा पुरस्कृत किया। 'कला' आपकी विशिष्ट कृति है जो आज भी प्रासंगिक है।

कला
हंसकुमार तिवारी
81-7124-233-2

मूल्य :
सजिल्द रु० 150.00

प्राप्ति स्थान
विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी
www.vvpbooks.com

भारतीय संस्कृति की भूमिका — *हृदयनारायण दीक्षित* से ....

अथर्ववेद

ऋग्वेद दुनिया का ज्ञान का प्राचीनतम अभिलेख—एनसाइक्लोपीडिया (विश्वकोश) है वैसे ही भौतिक जगत की सूक्ष्म व्याख्या और दार्शनिक जिज्ञासा से भरा हुआ विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ अथर्ववेद है। पश्चिमी विद्वानों ने इसे अंधविश्वासी जादू-टोनेवाला वेद बताया। अधिकतर विद्वानों ने इसे पश्चिमी विद्वानों के नजरिए से ही देखा। इसलिए भौतिक विज्ञान और दर्शन से सराबोर इस महत्त्वपूर्ण प्राचीन ज्ञानग्रन्थ की प्रतिष्ठित चर्चा कम हुई है। आचार्य सायण ने 14वीं सदी में ही इसका भाष्य किया। ग्रिफ्थ ने इसका अंग्रेजी अनुवाद (1895-96) किया। ल्यूडविग ने जर्मन भाषा में इसका अनुवाद किया। वेदविज्ञानी सातवलेकर ने इसका विस्तृत भाष्य किया। ब्लूमफील्ड ने अंग्रेजी अनुवाद के साथ-साथ अपनी टिप्पणियाँ भी जोड़ीं। आर्य-समाज ने भी इसका अनुवाद किया। अथर्ववेद सारी दुनिया में पढ़ा गया, जाँचा गया पर भारत के पश्चिम मोहित विद्वानों के बीच इसे परिपूर्ण प्रतिष्ठा नहीं मिली बावजूद इसके अथर्ववेद में विलक्षण जिज्ञासा है, अप्रतिम काव्यसौन्दर्य है, अद्‌भुत दार्शनिक ऊँचाई है। रोजमर्रा की भौतिक समस्याओं के समाधान भी है।

विश्व की सभी संस्कृतियों में देवता हैं। ऋग्वेद की तरह अथर्ववेद में भी मजेदार देवतन्त्र है। जहाँ-जहाँ ऊर्जा और दिव्यता, वहाँ-वहाँ आराधना और देवोपासना की परम्परा है लेकिन ब्लूमफील्ड ने अथर्ववेद के अनुवाद की भूमिका में ही जादू-टोने और अंधविश्वास के सवाल उठाए हैं। ब्लूमफील्ड जैसे विद्वानों को कण-कण में परम ऊर्जा और दिव्यता देखनेवाले 'भारतीय मन' की जानकारी नहीं थी। पश्चिम में 'काम' (सेक्स) जैविक भूख है, आनंददायी यौन-इच्छा है, लेकिन भारत में 'काम' पूजनीय देवता हैं। ऋग्वेद के सृष्टि सूक्त (10.129.4) में ऋषि कहते हैं, 'तत अग्रे काम: सं अवर्तत—सबसे पहले काम पैदा हुआ।' अथर्व. के 9वें काण्ड में काम ज्येष्ठा—सभी देवों में वरिष्ठ हैं, श्रेष्ठ हैं, महान हैं, ऋषि उसे नमस्कार करते हैं। काम सर्वव्यापी है। ऋषि कहते (9.2.20) हैं, ''जहाँ तक द्यौ और पृथ्वी विस्तृत है, जहाँ तक जल फैला हुआ है, काम उससे भी बड़ा व्यापक है। अथर्ववेद के कामदेव यौन-इच्छा नहीं हैं।'' सातवलेकर के अनुसार वह संकल्पशक्ति है। वह सृजनशीलता की भावना है। काम-भावना यहाँ जीवन का यथार्थ सत्य है, भौतिक भी, आधिभौतिक भी, आनंद की इच्छा भी, प्रेम की भावना भी और अंतत: सृष्टि-सर्जन का चिरंतन प्रवाह भी।

प्राण जीवन है। साँस लेने में आने-जानेवाली वायु, प्राण है। मनुष्य की जीवनी-शक्ति प्राण है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में प्राण की महिमा है। अथर्ववेद के 11वें काण्ड **चौथे सूक्त में प्राण** को ऋग्वेद के विराट या अदिति की तरह सर्वव्यापी बताया गया, 'भूत, भविष्य और वर्तमान काल में जो कुछ है वह सब प्राण है' (11.4.15)। यहाँ प्राण सर्वस्य ईश्वर है (11.4.1)। मेघ-गर्जन प्राण-गर्जन है, विद्युत चमक प्राण-चमक है (वही, मन्त्र 2)। प्राण ही जीवन है, प्राण ही मृत्यु है, इसलिए सभी देवता प्राण की उपासना करते हैं (11.4.11)। इसी तरह का प्यारा सूक्त काल पर भी है। 19वें काण्ड के 53 व 54 संख्या के सूक्त में कई चीजें दिलचस्प हैं, जैसे काल से सब उत्पन्न होते हैं, काल सबका पिता है, लेकिन काल से जो उत्पन्न होते हैं, वे भी काल हैं। इसलिए सूक्त 53/4 में कहा, 'वह पिता होता हुआ भी पुत्र है।' आगे कहा, ''काल से जल पैदा हुआ। काल से ज्ञान, तप और दिशाएँ उत्पन्न हुईं। काल से सूर्योदय और काल से सूर्यास्त है। काल में मन है। काल में प्राण है। अथर्ववेद के द्रष्टा विशेष रूप से अथर्व और अंगिरा हैं। सूक्त 54 में कहा, 'काल में अंगिरा है और काल में ही अथर्वा भी है।' काम, प्राण और कालसम्बन्धी सूक्त वैदिककाल की दिव्य काव्य-प्रतिभा के उदाहरण हैं।

अथर्ववेद पर जादूटोना और अंधविश्वास का दोषारोपण करनेवाले ब्लूमफील्ड जैसे लोग और भारतीय मार्क्सवादी दुराग्रही हैं। वे अथर्व के भौतिकवादी तत्त्वों को नहीं देखते। यहाँ **एक पूरा सूक्त अन्न पर** है ''उस अन्न का सिर बृहस्पति है, ब्रह्म उसका मुख है, द्यु और पृथ्वी कान हैं, सूर्य और चन्द्र आँखें हैं। बैलों के गले में बँधी रस्सियाँ इसकी आँते हैं। जुताई से बनी गहरी नालियाँ इसकी पसलियाँ हैं। ऋग्वेद द्वारा इसकी कुम्भी अग्नि पर रखी गई। अथर्ववेद द्वारा इसे धारण किया गया। सामवेदीय मन्त्रों से इसे घेरा गया। ऋतुएँ इसे पकाती हैं'' (11.3.1-17)। यहाँ अन्न का भावात्मक मानवीकरण है और उसे ऋग्वेद के विराट पुरुष की तरह एक पुरुष रूप में चित्रित किया गया है। आगे सूक्त में आखिरी मन्त्रों में दार्शनिक ऊँचाइयाँ हैं। ऋषि आपस में सवाल करते हैं, 'क्या आप अन्न खाते हैं या अन्न आपको खाता है?' उत्तर बड़ा दिलचस्प है 'न मैं अन्न खाता हूँ और न ही अन्न मुझे खाता है। वास्तव में अन्न ही अन्न को खाता है—नैवाहमोदनं न मामोदन: ओदन एवौदनं प्राशीत' (वही, मन्त्र 30-31)। बात सही भी है। यह मैं आत्मा अन्न नहीं खाता, शरीर का अन्नमय कोष ही अन्न खाता है। यहाँ अन्न को ब्रह्म के समकक्ष रखा गया। ऋग्वेद में अन्न की निन्दा न करने के निर्देश है। सामवेद (मन्त्र, 594) में अन्न 'प्रथमजा' है, 'मैं अन्न ऋत के द्वारा देवताओं से भी पहले उत्पन्न हुआ।' ऋत यहाँ सृष्टि-संचालन की सनातन कार्रवाई है। आचार्य श्रीराम शर्मा के अनुवाद में 'सनातन यज्ञ के द्वारा' शब्द आए हैं। प्रकृति के सारे प्रपंचों को ऋषियों ने यज्ञ कहा।

अथर्ववेद का भूमि सूक्त (12.1) विश्व-पर्यावरण-विज्ञान-संरक्षण का परिपूर्ण निर्देश है। ब्लूमफील्ड ने इसे अत्यन्त आकर्षक 'काव्य' बताया है। ऋषि कहते हैं, ''भूत और भविष्य के सभी जीवों का पालन करनेवाली मातृभूमि हमें विस्तृत स्थान दे। जहाँ सागर, नद, नदी, झीलें, कुएँ आदि जलस्रोत हैं, जहाँ अन्न, फल, वनस्पतियाँ हैं, जहाँ कृषक, शिल्पी, उद्यमी संगठित हैं, वह भूमि हमें श्रेष्ठ पदार्थ व ऐश्वर्य दे। मन्त्र 6 में भूमि को 'विश्वम्भरा'—विश्व का पोषक बताया गया। देवपुरुष इस भूमि की रक्षा करते हैं वह मातृभूमि हमें ज्ञान, वर्चस और ऐश्वर्य दे। मन्त्र 8 में भूमि और अंतरिक्ष के सम्बन्ध हैं, ''जिस भूमि का हृदय परम व्योम के सत्य अमृत-प्रवाह से आवृत रहता है, वह भूमि राष्ट्रबल दे।'' आगे के दो मन्त्रों 38 व 39 में अथर्ववेद के पहले के तीनों वेदों को याद किया गया, ''जिस भूमि पर ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद के मन्त्रों से अर्चना होती है, जहाँ विश्वहितैषी ऋषियों ने यज्ञ किए, वन्दना की, वह पृथ्वी हमें ऐश्वर्य दे।'' मन्त्र 41 में नृत्य, गीत और युद्ध का एक साथ वर्णन है, ''जिस भूमि में मनुष्य गीत गाते, नृत्य करते हैं और राष्ट्र-संरक्षण के लिए युद्ध करते हैं, वह भूमि हमें शत्रुविहीन करे।'' गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत 18वीं सदी में खोजा गया बताया जाता है किन्तु भूमि सूक्त के मन्त्र 48 में वह हजारों बरस पहले विद्यमान है, ''गुरुत्वाकर्षण-शक्ति को धारण करनेवाली पृथ्वी पुण्यात्मा और पापात्मा दोनों तरह के लोगों का भार सहन करती हुई सूर्य के चारों ओर भ्रमण करती है।'' पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से मूल्यवान एक सुन्दर मन्त्र (35) बार-बार पठनीय है, ''जब हम आपको खोदें तो आप शीघ्र वैसी ही हो जाएँ, हमारे द्वारा आपके मर्मस्थलों को हानि न पहुँचे।''.....

विस्तृत अध्ययन हेतु पढ़ें—

भारतीय संस्कृति की भूमिका

हृदयनारायण दीक्षित

978-81-7124-625-0

मूल्य :
सजिल्द रु० 250.00

प्राप्ति स्थान

विश्वविद्यालय प्रकाशन ,चौक, वाराणसी

www.vvpbooks.com

अत्र-तत्र-सर्वत्र

संस्कृत वेदांत की परीक्षा में मुस्लिम छात्रा प्रथम

तिरुवनंतपुरम। केरल यूनिवर्सिटी के संस्कृत वेदांत की परीक्षा में एक मुस्लिम लड़की रहमत ने प्रथम स्थान प्राप्त किया है। कोल्लम के सस्थामकोट्टाह में देवासोम बोर्ड के एक कॉलेज की इस 21 वर्षीय छात्रा ने बताया कि उसके संस्कृत पढ़ने पर उसके परिवार वालों तथा समुदाय के लोगों ने विरोध नहीं किया अपितु हौसला ही बढ़ाया।

'रेणु' उपन्यास राष्ट्रपति को भेंट

नई दिल्ली में राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल को लक्ष्मण दास ने अपने उपन्यास 'रेणु' की प्रथम प्रति भेंट की। उल्लेखनीय है कि राजधानी में पिछले दो दशक से हिन्दी भवन के निकट सड़क के किनारे चाय बनाकर अपनी जीविका चलाने वाले 'चाय वाले लेखक' के रूप में प्रसिद्ध उपन्यासकार लक्ष्मण दास अब तक बीस उपन्यास लिख चुके हैं।

हिन्दी के विदेशी शिक्षकों को प्रशिक्षण

विदेशों के सौ से अधिक विश्वविद्यालय में हिन्दी पढ़ाने वाले शिक्षक अब भारत में हिन्दी का विशेष प्रशिक्षण वर्धा स्थित महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय में ले सकेंगे। यह योजना मानव संसाधन विकास मंत्रालय और विदेश मंत्रालय ने मिलकर बनाई है। विश्वविद्यालय के कुलपति विभूति नारायण राय ने बताया कि भूमण्डलीकरण और बाजार के कारण हिन्दी का प्रचार-प्रसार दुनिया में बढ़ा है और प्रवासी भारतीयों की आबादी बढ़ने से भी विदेशों में हिन्दी पढ़ाने की बढ़ी हुई जरूरत को देखते हुए मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने विदेशों में हिन्दी पढ़ाने वाले शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण देने के लिए हमें प्रस्ताव भेजा है।

नीदरलैंड में 'इंडिया हाउस'

नीदरलैंड की राजधानी में 'इंडिया हाउस' नाम से भारतीय संस्कृति केन्द्र की स्थापना भारतीय मूल के एक प्रवासी व्यवसायी राजकुमार जगबंधन द्वारा अपने व्यक्तिगत प्रयास से की जा रही है। इस केन्द्र का उद्देश्य नीदरलैंड में बसे भारतीयों तथा यहाँ के निवासियों की भारतीय संस्कृति के विषय में उनकी रुचि को संतुष्ट करना है। इसके लिए केन्द्र मे भारत सम्बन्धी सभी प्रकार की जानकारियाँ उपलब्ध होंगी।

शंकर शेष के नाटक के मंचन पर रोक

जसवंत सिंह की पुस्तक 'जिन्ना : इंडिया पार्टिशन इंडीपेंडेंस', हबीब तनवीर के नाटक 'चरण दास चोर' के बाद अब शंकर शेष के नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' के मंचन पर रोक लगाई गई है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापकों और छात्रों द्वारा तैयार इस नाटक को प्रदर्शन के एक दिन पहले रोक दिया गया। शिक्षकों की भावनाओं को आहत होने की आशंका से प्रदर्शन पर रोक लगा दी गई।

स्वागत है कीट्स के घर में

प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि जॉन कीट्स का निवास एक बार फिर से प्रशंसकों के लिए खोल दिया गया है। *लंदन हाउस* नामक इस घर में उन्होंने कई प्रसिद्ध कविताओं की रचना की थी।

हैंपस्टेड हीथ के निकट स्थित इस घर के जीर्णोद्धार में पाँच लाख पौंड का खर्च आया। स्व० कीट्स ने यहाँ *ओड ऑन अ ग्रैसियन उर्न* और *ओड टू ए नाइटैंगल* की रचना की थी। फैनी ब्राउन से उनका प्रेम भी यहीं पर पनपा।

क्षय रोग के कारण 1821 में कीट्स की मृत्यु हो गई थी। तब वे मात्र 25 साल के थे। 1925 में संग्रहालय में परिवर्तित इस घर को 2007 में मरम्मत के लिए बंद कर दिया गया था। अब लंदन हाउस अपने मूल स्वरूप में लौट आया है। यहाँ कई पेंटिंग्स, ड्राइंग्स के साथ ही कीट्स द्वारा फैनी को दी गई सगाई की अंगूठी भी प्रदर्शित की गई है।

डॉ० श्रीप्रसाद के बाल साहित्य पर शोध उपाधि

डॉ० श्रीप्रसाद के बाल साहित्य पर सन् 2003 में डॉ० भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय (आगरा) से श्रीमती पुष्पादेवी ने डॉ० प्रेमीराम मिश्र, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, एटा (उ०प्र०) के निर्देशन में पी-एच०डी० शोध उपाधि प्राप्त की थी। शोध विषय था 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी बाल साहित्य में डॉ० श्रीप्रसाद का योगदान।' सन् 2008 में हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय (टेहरी गढ़वाल) से प्रो० कुसुम मिश्र (डोभाल), अध्यक्ष, हिन्दी विभाग के निर्देशन में पप्पू लाल ने पी-एच०डी० शोध उपाधि प्राप्त की है। डॉ० श्रीप्रसाद के बाल साहित्य पर यह दूसरी शोध उपाधि है, जिसका विषय था 'डॉ० श्रीप्रसाद के बाल साहित्य का अनुशीलन।'

डॉ० श्रीप्रसाद लगभग पचपन वर्षों से बाल साहित्य की सभी विधाओं (काव्य, कहानी, नाटक, उपन्यास) में सृजन कर रहे हैं और इनकी 50 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिन्हें राष्ट्रीय और प्रादेशिक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। स्वीडिश भाषा में प्रकाशित सतहत्तर देशों के विश्व बालकाव्य संग्रह में भारत से इन्हें सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार इनकी कविता 'बिल्ली को जुकाम' को बाल कविता का विश्वमंच प्राप्त हुआ है। संग्रह में एक देश से एक कवि को संकलित किया गया है। डॉ० श्रीप्रसाद को सर्वोच्च बाल साहित्य सम्मान 'बाल साहित्य भारती' (उ०प्र०हि०सं०, लखनऊ) सन् 1995 में प्रदान किया गया था और बाल साहित्य सृजन के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद ने 'साहित्य महोपाध्याय' मानद उपाधि प्रदान की है। अन्य अनेक पुरस्कार और सम्मान भी इन्हें प्राप्त हुए हैं।

जर्मन रेडियो की हिन्दी सेवा की 45वीं वर्षगाँठ

जर्मन रेडियो डॉयचे वेले की विदेश प्रसारण सेवा में 15 अगस्त, 1964 को हिन्दी रेडियो सेवा का आरम्भ किया गया था जिसने अब 45 वर्ष पूरे कर लिए हैं। हिन्दी समाचारों की दुनिया में इसकी अपनी एक विशिष्ट पहचान है और इससे हिन्दी को प्रचार-प्रसार एवं लोकप्रियता प्राप्त हुई है।

इग्नू ने अपनाई भोजपुरी, कोर्स शुरू

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) ने अब भोजपुरी को अपना लिया है। इसके लिए छह माह के सर्टिफिकेट कोर्स की शुरुआत भोजपुरी भाषा में की गई है। ऑनलाइन प्रवेश प्रक्रिया शुरू करने के साथ ही अनवरत परीक्षा देने का प्रावधान लागू कर दिया गया है। इसमें विद्यार्थी किसी भी समय फार्म भरकर परीक्षा दे सकते हैं।

समन्वय दर्शन

भारतीय समाज समन्वय के दर्शन के आधार पर सैकड़ों सालों से चल रहा है और आज भी अगर अपने झगड़े मिटाने के लिए कर्नाटक और तमिलनाडु ईसा पूर्व के कवि 'तिरुवल्लुवर' और सोलहवीं सदी के कवि 'सर्वज्ञ' की मदद ले रहे हैं तो इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। झगड़े तब होते हैं, जब समाज का कोई हिस्सा अपने क्षेत्रीय स्वार्थ के तहत इतना कट्टर बन जाता है कि उसे न तो दूसरे प्रान्त का हित दिखाई देता है और न ही किसी तरह की साझी विरासत। लेकिन इसके विपरीत सद्भाव जगने के साथ झगड़े मिटने भी लगते हैं। भले ही यह कहा जा रहा हो कि कर्नाटक के मुख्यमंत्री येदयुरप्पा ने बंगलूर के तमिल मतदाताओं को रिझाने और तमिलनाडु में भाजपा की जड़ें जमाने के लिए 18 साल से विवाद में फंसी 'तिरुवल्लुवर' की प्रतिमा का अनावरण करवाया है, पर प्रेम की डोर पकड़ कर हो रही यह राजनीति स्वागतयोग्य है। कावेरी के जल बँटवारे को लेकर पिछले 18 साल से तनाव और दंगों की राजनीति तक पहुँच चुके दोनों राज्य अगर प्रतिमाओं और कविताओं के आलोक में इक्कीसवीं सदी की समस्या हल कर रहे हैं तो इससे राजनीति और अर्थशास्त्र के इस युग में साहित्य और संस्कृति की बड़ी सकारात्मक भूमिका रेखांकित होती है। जिस विवाद को हल करने में विद्वानों की समितियाँ, पंचाट और सुप्रीम कोर्ट सफल नहीं हो पा रहे थे, उसे अगर जनकवियों की प्रतिमाओं से हल किया जा रहा है

तो इसमें जरूर सत्साहित्य और उससे जुड़ी भावना का असर छुपा है। 'तिरुवल्लुवर' तमिल भाषा के ऐसे कवि हैं, जिनके जन्म और पंथ को लेकर कई मत हैं, उन्हें हिन्दू और बौद्ध दोनों सम्प्रदायों में रखा जाता है। लेकिन एक बात पर सभी एकमत हैं कि उनकी कविताएँ लोगों के बीच जन्मगत भेदभाव मिटाने वाली हैं। उसी तरह त्रिपद की रचना करने वाले 'सर्वज्ञ' पिछड़े वर्गों के पक्षधर माने जाते हैं। इसीलिए करुणानिधि और येदयुरप्पा किसानों से विवाद भुला कर कांस्य की इन प्रतिमाओं से प्रेम सीखने की सलाह दे सके।

प्रो० रमेश दवे मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के पुनः अध्यक्ष निर्वाचित

प्रख्यात साहित्यकार और शिक्षाविद् प्रो० रमेश दवे मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के अध्यक्ष पद पर तीन साल के लिए सर्वसम्मति से पुनः निर्वाचित हुए हैं। वे सन् 2006 में पहली बार इस समिति के अध्यक्ष बने थे। अध्यक्ष के निर्वाचन के लिये मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा समिति की नवगठित व्यवस्थापिका सभा की बैठक हिन्दी भवन में पिछले दिनों राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधानमंत्री अनंतराम त्रिपाठी की विशेष उपस्थिति में सम्पन्न हुई। निर्वाचन अधिकारी उपेन्द्र पाण्डेय ने निर्वाचन की प्रक्रिया पूर्ण कराई।

हिन्दी माध्यम के रोजगार मूलक पाठ्यक्रम प्रारम्भ होंगे

राष्ट्रभाषा हिन्दी को रोजगार से जोड़ने के लिए केन्द्रीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा देश में हिन्दी माध्यम के 75 रोजगार मूलक पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने पर गम्भीरता से विचार कर रही है। इस दिशा में पाठ्यक्रमों के परीक्षण की कार्यवाही प्रारम्भ की जा चुकी है। यह जानकारी केन्द्रीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधानमंत्री श्री अनंतराम त्रिपाठी ने यहाँ हिन्दी भवन में मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की नवगठित व्यवस्थापिका सभा की प्रथम बैठक को सम्बोधित करते हुए दी। बैठक की अध्यक्षता प्रांतीय समिति के नव निर्वाचित अध्यक्ष प्रो० रमेश दवे ने की। श्री त्रिपाठी ने बताया कि अब तक एक करोड़ 55 लाख परीक्षार्थी राष्ट्रभाषा की विभिन्न परिक्षाएँ दे चुके हैं। हर साल देश में तीन लाख से अधिक परीक्षार्थी इन परीक्षाओं में बैठते हैं।

श्री अनंतराम त्रिपाठी ने आगे बताया कि हिन्दी के लिए देश में अनुकूल वातावरण हेतु उसको रोजगार से जोड़ना अब अनिवार्य हो गया है। हिन्दी माध्यम के ये पाठ्यक्रम इस आवश्यकता को पूरा करेंगे। अंग्रेजी के पक्ष में जो मानसिकता बनी है उसको बदलने में भी ये पाठ्यक्रम निश्चित ही सहायक होंगे। आपने हिन्दी सेवी कार्यकर्ताओं और हिन्दी प्रेमियों से आग्रह किया कि वे हिन्दी से जुड़े हर काम में पूरा सहयोग करें।

सम्मान-पुरस्कार

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किये गये डॉ० सत्यव्रत शास्त्री

संस्कृत के लब्ध कीर्ति साहित्यकार, कवि, आलोचक **डॉक्टर सत्यव्रत शास्त्री** को 19 अगस्त 2009 को भारतीय साहित्य के शीर्ष सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। शास्त्री जी यह सम्मान पानेवाले संस्कृत के पहले रचनाकार हैं। संसद के बालयोगी सभागार में थाइलैंड की राजकुमारी महाचक्री सिरिन्थौन ने शास्त्री को वर्ष 2006 के ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया। पुरस्कार के रूप में उन्हें सरस्वती की प्रतिमा, प्रशस्ति-पत्र और *सात लाख रुपए* का ड्राफ्ट प्रदान किया गया।

राजकुमारी ने कहा कि शास्त्री जी को पुरस्कार देने से संस्कृत का सम्मान हुआ है। राजकुमारी शास्त्री जी की शिष्या रह चुकी हैं और उन्होंने संस्कृत से परास्नातक की उपाधि ली है।

सरस्वती व शिक्षक श्री पुरस्कार

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए उत्तर प्रदेश सरकार तीन शिक्षकों को 'सरस्वती' सम्मान व छह शिक्षकों को 'शिक्षक श्री' पुरस्कार देगी। 'सरस्वती सम्मान' पाने वालों में लखनऊ विश्वविद्यालय के विधि विभाग के **प्रोफेसर अवतार सिंह**, गोरखपुर व इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति **प्रो० आर०पी० रस्तोगी** व इलाहाबाद विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष **प्रोफेसर चण्डिकाप्रसाद शुक्ल** हैं।

जिसके अन्तर्गत एक-एक लाख रुपये की राशि दी जाएगी। 'शिक्षक श्री पुरस्कार' पाने वालों में लखनऊ विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के **प्रोफेसर मोहम्मद मुजम्मिल**, लखनऊ विश्वविद्यालय के **प्रोफेसर डी०डी० शर्मा**, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रोफेसर **जे०डी० पाण्डेय**, बागपत जिले के छपरौली राजकीय महाविद्यालय के प्राचार्य **डॉ० नगीना सिंह**, इलाहाबाद के हंडिया में स्थित राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य **सभापति सिंह** व बरेली के राजकीय महिला महाविद्यालय की प्राचार्या **संध्या रानी** शामिल हैं। जिसके अन्तर्गत शिक्षकों को *50-50 हजार रुपये* की पुरस्कार राशि दी जाएगी।

उ०प्र० के 30 शिक्षकों को राष्ट्रपति पुरस्कार

शिक्षा के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान देने वाले उत्तर प्रदेश के 30 शिक्षक-शिक्षिकाओं को राष्ट्रपति पुरस्कार के लिए चयनित किया गया।

वर्ष 2008 के लिये राष्ट्रपति पुरस्कार के अन्तर्गत निम्नांकित सर्वश्रेष्ठ शिक्षकों को *25 हजार रुपये* की धनराशि, दो साल का सेवा विस्तार, रजत पदक और रेल व बस में मुफ्त यात्रा का उपहार प्रदान किया गया।

प्राथमिक विद्यालय में विजयलक्ष्मी (गोंडा), देवेन्द्र चरण खरे (फैजाबाद), लाखनसिंह (फतेहपुर), खुशीराम दुबे (फैजाबाद), जगदीश गंगवार (पीलीभीत), अब्दुल समद खान (मेरठ), विजय सिंह (फतेहपुर), हरिनाथ दुबे (वाराणसी), जगदीश शरण शर्मा (गाजियाबाद), गेंदनलाल (बरेली), रज्जन अवस्थी (फतेहपुर), रामदास (बरेली), रामकुमार त्रिपाठी (गाजीपुर), किशोरी मिश्रा (बस्ती), शंकुतला त्रिपाठी (गोरखपुर), सलीमुद्दीन (सहारनपुर), दिनेशकुमार कौशिक (बिजनौर), डॉ० सुरेशचन्द्र अवस्थी व इंदर सिंह गाँधी (कानपुर), विशेष श्रेणी के प्राथमिक विद्यालयों में मो० इदरीश (अंबेडकर नगर), नंदलाल (महराजगंज) व सेंकेंडरी विद्यालयों के शिक्षकों में श्रीमती ऊषा आनंद (मेरठ), शशिभूषण तिवारी (वाराणसी), केशव नारायण शुक्ल (बहराइच) मालती शर्मा (फतेहपुर), डॉ० तेजप्रताप सिंह (देवरिया), डॉ० धनंजय गुप्ता (लखनऊ), विशेष श्रेणी सेकेंडरी विद्यालयों के शिक्षकों में हरीओम श्रीवास्तव (कन्नौज), संस्कृत अध्यापकों में डॉ० ब्रह्मानंद शुक्ल (मिर्जापुर), सालिगराम त्रिपाठी (बस्ती), को चयनित किया गया है।

'रेहन पर रघु' के लिए काशीनाथ सिंह को जोशी सम्मान

वर्ष 2009 के 'जे०सी० जोशी स्मृति सम्मान' के अन्तर्गत इस वर्ष कुल सात सम्मान प्रदान किए गये। 'शब्द साधक शिखर सम्मान' *राग दरबारी* के रचनाकार **श्रीलाल शुक्ल** को दिया गया। पिछले वर्ष यह सम्मान **विष्णु प्रभाकर** को दिया गया था।

इस सम्मान के अलावा 'शब्द साधना जूरी' के लिए **भगवान दास मोरवाला** को उनके उपन्यास 'रेत' के लिए चयन किया गया। 'शब्द साधना जनप्रिय लेखक सम्मानों' में उपन्यास श्रेणी में **काशीनाथ सिंह** के 'रेहन पर रघु', कहानी श्रेणी में **एस०आर० हरनोट** की 'जीवनकाठी और अन्य कहानियाँ', कविता श्रेणी में **शैलेय** को 'या' तथा आलोचना श्रेणी में **अपूर्वानंद** को उनकी पुस्तक 'साहित्य का एकांत' के लिए चुना गया है। 'शब्द साधना युवा सम्मान' कविता के लिए **रमेश कुमार वर्णवाल** को उनकी कविता 'एक पुरातत्वविद् की डायरी से' हेतु चयन किया गया है।

पार्थसारथी को सम्मान

जानी-मानी शिक्षाविद् **वाई०जी० पार्थसारथी** को अमेरिका के एक प्रतिष्ठित सम्मान के लिए चयनित किया गया। शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए वर्जीनिया के सेण्टर फॉर एक्सिलेंस इन एजुकेशन (सीईई) की ओर से उन्हें यह सम्मान दिया गया। पार्थसारथी चेन्नई में पीएसएसबी ग्रुप की डीन और निदेशक हैं।

डॉ० नीरजा को 'शंकराचार्य' पुरस्कार

साहित्यकार और आकाशवाणी की निदेशक **डॉ० नीरजा माधव** को उनके उपन्यास 'अनुपमेय शंकर' हेतु *इक्यावन हजार रुपये* के प्रतिष्ठित 'शंकराचार्य पुरस्कार' के लिए चयनित किया गया। जो अखिल भारतीय आध्यात्मिक उत्थान मण्डल, कोलकाता की ओर से दिया गया। शंकराचार्य के जीवन के अनेक अनछुए प्रसंगों को डॉ० माधव ने अपने उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। उन्हें मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी एवार्ड भी उनके उपन्यास 'गेशे जम्पा' के लिए मिल चुका है। अब तक उनकी चौदह पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

उमंग के बाल रंग सम्मान

बाल रंगमंच विशेषज्ञ श्रीमती रेखा जैन द्वारा स्थापित और संचालित बच्चों के रंगमंच की प्रमुख संस्था उमंग, जो अपने 30 साल पूरे कर चुकी है, ने हिन्दी में बाल रंगकर्म व नाट्य लेखन को बढ़ावा देने के लिए 'बाल रंग सम्मान' की घोषणा की। यह सम्मान हर वर्ष हिन्दी के किसी ऐसे बाल रंगकर्मी या नाटककार को दिया जाएगा जिसने इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान व उसको नई दिशा प्रदान की हो। केवल बाल रंगमंच के लिए दिया जाने वाला यह सम्भवत: पहला सम्मान है।

वर्ष 2009 का पहला सम्मान विशेष रूप से दो व्यक्तियों को दिया जायोगा—जाने-माने रंग निर्देशक और परिकल्पक **श्री बंसी कौल** व बाल कथाओं तथा बाल नाटकों के रचेताओं में अग्रणी **डॉ० हरिकृष्ण देवसरे** को। इस सम्मान के अन्तर्गत *25,000 रुपये* की राशि व प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाएगा।

आचार्य द्विवेदी को वेदव्यास पुरस्कार

बीएचयू के इमेरिट्स प्रोफेसर व संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान संकाय के पूर्व प्रमुख **आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी** को *एक लाख रुपये* के राष्ट्रीय संस्कृत वेदव्यास पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। यह सम्मान विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने दिया है।

उदय प्रकाश को सम्मान

नई दिल्ली। त्रिवेणी सभागार में प्रख्यात चित्रकार सैयद हैदर रज़ा की पहल पर साहित्य और कलाओं के केन्द्र के रूप में बनाई गई संस्था 'एकत्र' की ओर से आयोजित समारोह में कवि-कथाकार **उदय प्रकाश** को 'कृष्ण बलदेव वैद सम्मान' स्वयं बलदेव वैद ने प्रदान किया। पुरस्कार में *एक लाख* की राशि प्रदान की गई। इसी क्रम में गोरखपुर के दिग्विजय पीजी कॉलेज

संस्कृत के साहित्यकार को ज्ञानपीठ पुरस्कार

राजेन्द्र कृष्ण

देश के शिखर साहित्यिक सम्मान 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' से इस वर्ष संस्कृत भाषा के मूर्धन्य साहित्यकार **प्रोफेसर सत्यव्रत शास्त्री** को सम्मानित किया गया है। 19 अगस्त को संसद् पुस्तकालय भवन के बालयोगी सभागार में आयोजित एक भव्य समारोह में थाईलैंड की महाराज कुमारी महाचक्री सिरिंथौर्न ने अपने गुरु और संस्कृत के कवि-आलोचक डॉ० सत्यव्रत शास्त्री को 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से अलंकृत किया। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संस्कृत विद्वानों द्वारा उनकी बहुप्रशंसित रचना *श्रीरामकीर्ति-महाकाव्यम्* को केन्द्र में रखते हुए उनके समग्र साहित्य के लिए यह शीर्ष सम्मान दिया गया है।

प्रोफेसर सत्यव्रत शास्त्री का जन्म 29 सितम्बर, 1930 को लाहौर में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा उनके पिता और संस्कृत साहित्य के विख्यात विद्वान चारूदेव शास्त्री की छत्रछाया में हुई। उनकी प्रतिभा का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि पंजाब विश्वविद्यालय से बी०ए० ऑनर्स (संस्कृत) करते हुए उन्होंने सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए थे। एम०ए० संस्कृत में भी प्रथम स्थान प्राप्त कर नया कीर्तिमान स्थापित किया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से उन्होंने पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की। प्रो० शास्त्री ने देश-विदेश के विश्वविद्यालयों में संस्कृत भाषा और साहित्य का अध्यापन किया और इसके द्वारा उन्होंने भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के बीच प्राचीन सांस्कृतिक सम्बन्धों को पुनर्जीवित किया। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में वर्ष 1955 से लगातार 40 वर्षों तक अध्यापन-कार्य किया। वे जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी के कुलपति भी रहे। शास्त्रीजी की प्रेरणा और प्रयत्नों के फलस्वरूप ही बैंकाक स्थित सिल्पाकॉर्न विश्वविद्यालय में 'संस्कृत अध्ययन केन्द्र' की स्थापना की गई, जहाँ आज पी-एच०डी० स्तर की संस्कृत शिक्षा दी जा रही है। इस दिशा में शास्त्रीजी के अवदान की स्वीकृति के स्वरूप ही उस विश्वविद्यालय के प्राच्य भाषा विभाग के पुस्तकालय का नाम 'डॉ० सत्यव्रत शास्त्री पुस्तकालय' रखा गया है। बैंकाक के तीन अन्य विश्वविद्यालयों में भी शास्त्रीजी की प्रेरणा से स्नातकोत्तर संस्कृत शिक्षा का काम हो रहा है और उनके प्राच्य भाषा विभागों के अध्यक्ष पदों पर शास्त्रीजी के शिष्य ही काम कर रहे हैं। प्रो० शास्त्री ने थाईलैंड के राज परिवार में भी संस्कृत ज्ञान का प्रवेश कराया। इस तरह शास्त्रीजी ने दक्षिण-पूर्व एशिया, यूरोप, उत्तर और लैटिन अमेरिका के कई देशों में संस्कृत साहित्य के वैभव और उदात्त भारतीय संस्कृति का परचम लहराया।

सृजनात्मक और शोधपरक समीक्षात्मक-साहित्य के दोनों पक्षों में प्रो० शास्त्री का महत्त्वपूर्ण अवदान रहा है। उनकी मौलिक कृतियों में तीन महाकाव्य महत्त्वपूर्ण हैं, जिसमें थाई देश की रामकथा *रामकियन* पर आधारित बहुचर्चित *रामकीर्तिमहाकाव्यम्* विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका हिन्दी, असमिया, कन्नड़, तमिल, मलयालम, अंग्रेजी, थाई और फ्रेंच में अनुवाद हो चुका है। यह दक्षिण-पूर्व एशिया की किसी भी रामकथा पर पहला संस्कृत महाकाव्य है और संस्कृत का एकमात्र ग्रन्थ है, जिसका इतनी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। प्रो० शास्त्री की समीक्षात्मक कृतियों में *द रामायण, ए लिंग्यूस्टिक स्टडी* (वाल्मीकि रामायण का भाषाशास्त्रीय अध्ययन) विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो किसी संस्कृत ग्रन्थ का अब तक का पहला और एकमात्र भाषाशास्त्रीय अध्ययन है।

शास्त्रीजी ने जर्मनी के गेटे, इटली के दाँते और मोंताले, रोमानिया के मिहाई एमेनेस्कू, स्पेन के ऐविवर्त्सा आदि प्रख्यात कवियों की कृतियों के संस्कृत में अनुवाद के जरिये संस्कृत साहित्य में अभिनव प्रयोग किए। उन्होंने *भक्तिव्यानां द्वाराणि भवंति सर्वत्र:* नामक आत्मकथा और पद्यमय यात्रा-संस्मरणों की भी रचना की, जो संस्कृत साहित्य में विरल है। उन्होंने 150 से अधिक शोध-निबन्ध, सैकड़ों पुस्तकों की समीक्षाएँ लिखीं और दक्षिण-पूर्व एशिया, यूरोप, उत्तर और दक्षिण अमेरिका के कई देशों में शोधपरक भाषण दिए।

प्रो० शास्त्री धर्मनिरपेक्षता और सर्वधर्म समभाव के पक्षधर हैं। इस दिशा में उनके साहित्यिक अवदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। सिखों के दसवें गुरु के जीवन-चरित्र पर आधारित संस्कृत महाकाव्य *श्री गुरुगोविंदसिंहचरितम्* साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित हुआ। *श्री बोधिसत्वचरितम्* गौतम बुद्ध के पूर्व जन्म की जातक कथाओं पर आधारित एक हजार पद्यों का महाकाव्य है।

मुसलमानों का संस्कृत को योगदान स्मारक भाषण है, जो बाद में पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ। *देवदासी सुवास:* ईसाई साहित्य पर आधारित है। *प्राकृत और जैन* शीर्षक पुस्तक जैन धर्म पर आधारित है, जो जैनों की प्रख्यात संस्था 'कुंद-कुंद भारती' द्वारा *एक लाख रुपये* के आचार्य उमास्वामी पुरस्कार से सम्मानित हुई। इस तरह प्रो० शास्त्री ने हिन्दू, बौद्ध, जैन, मुसलिम, सिख और ईसाई धर्मों के समन्वय की दिशा में सार्थक और महत्त्वपूर्ण कार्य किए। विभिन्न धार्मिक संस्थाओं द्वारा इनकी सराहना की गई। आज के जीवन-सन्दर्भों में प्रो० शास्त्री के प्रयास और उनकी साहित्यिक कृतियाँ, साम्प्रदायिक सौहार्द की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और स्तुत्य हैं। (*'अमर उजाला' से साभार*)

के सभागार में डॉ० कुँवर नरेन्द्र प्रताप सिंह जयंती समारोह में सन् 2009 का 'नरेन्द्र सम्मान' लोकसभा सांसद योगी आदित्यनाथ के हाथों कवि-कथाकार **उदय प्रकाश** ने ग्रहण किया।

विज्ञान व्रत को सीनियर फेलोशिप

सांस्कृतिक मंत्रालय, भारत सरकार की ओर से देश के बहुचर्चित कलाविद् एवं साहित्यकार **श्री विज्ञान व्रत** को वर्ष 2009-11 के लिए 'सीनियर फेलोशिप (पेण्टिंग)' प्रदान की गयी है। इस हेतु उन्हें *15 हजार रुपये* प्रतिमाह प्रदान किया जाएगा।

मुद्राराक्षस को अकादमी पुरस्कार

नई दिल्ली के विज्ञान भवन में संगीत-नाटक अकादमी द्वारा आयोजित एक भव्य समारोह में राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने अकादमी के वर्ष 2008 के पुरस्कार प्रदान किए। नाट्य लेखन के लिए हिन्दी के प्रसिद्ध नाटककार **मुद्राराक्षस** को 'संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार' प्रदान किया गया। उनके साथ संगीत वाद्य और गायन आदि के तैंतीस कलाकारों को पुरस्कार तथा प्रसिद्ध नृत्यांगना व अभिनेत्री सितारा देवी, लोक गायक व संगीतकार भूपेन हजारिका और संगीतविद् आर०सी० मेहता को 'फेलोशिप' प्रदान की गई।

नंदन को परम्परा विशिष्ट ऋतुराज सम्मान

नई दिल्ली में आयोजित परम्परा सम्मान समारोह में प्रख्यात कवि **डॉ० कन्हैयालाल नंदन** वर्ष 2009 के 'परम्परा विशिष्ट ऋतुराज सम्मान' से सम्मानित हुए। गत वर्ष इस पुरस्कार से सम्मानित प्रख्यात समालोचक डॉ० नामवर सिंह ने उन्हें सम्मान अर्पित किया।

युवा कवि **आलोक श्रीवास्तव** को गजल-संग्रह 'आमीन' और **पवन करण** को काव्य-संग्रह 'स्त्री मेरे भीतर' के लिए इस वर्ष का 'परम्परा ऋतुराज सम्मान' संयुक्त रूप से दिया गया। इस वर्ष से परम्परा द्वारा 'परम्परा सम्मान' भी शुरू किया गया जो अल्मोड़ा के **शैलेय** को दिया गया। संचालन अशोक चक्रधर ने किया।

मोहन राणा को कथा यूके सम्मान

लंदन में कथा यूके द्वारा ब्रिटिश संसद के हाउस ऑफ कामन्स में आयोजित समारोह में इस वर्ष का दसवाँ 'पद्मानंद साहित्य सम्मान' प्रवासी कवि **मोहन राणा** को पूर्व आंतरिक सुरक्षा मंत्री टोनी मैक्नल्टी द्वारा प्रदान किया गया। भारत से बाहर बसे लेखकों में मोहन राणा उन गिने-चुने कवियों में हैं जिन्होंने समकालीन हिन्दी कविता में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

वीणापाणि पाटनी सम्मानित

अयोध्यापुरी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने अपने शताब्दी वर्ष के अवसर पर आयोजित अखिल भारतीय विद्वत् सम्मेलन में संस्कृत की सर्वोच्च मानद उपाधि 'महामहोपाध्याय' से **डॉ० वीणापाणि पाटनी** सहित ग्यारह संस्कृत विद्वानों को विभूषित किया।

बिड़ला फाउंडेशन का बिहारी सम्मान

जयपुर में नेहरू युवा केन्द्र में के०के० बिड़ला फाउंडेशन द्वारा स्थापित 'बिहारी पुरस्कार' राजस्थान निवासी हिन्दी के प्रख्यात कवि **नंद भारद्वाज** के 'हरी दूब का सपना' शीर्षक उनकी काव्यकृति पर राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत द्वारा प्रदान किया गया।

समारोह में फाउंडेशन की अध्यक्ष शोभना भरतिया विशेष रूप से उपस्थित थीं।

भाषाविदों को राष्ट्रपति सम्मान

राष्ट्रपति की ओर से स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर संस्कृत, पालि-प्राकृत, अरबी तथा फारसी भाषाओं में उल्लेखनीय योगदान के लिए विद्वानों को राष्ट्रपति सम्मान प्रदान करने की घोषणा की गई है। इनमें संस्कृत के लिए कोम्पेला रामसूर्यनारायण, डॉ० वाचस्पति शर्मा त्रिपाठी, डॉ० रमाकान्त शुक्ल, प्रो० विश्वमूर्ति शास्त्री, डॉ० एन०एस० अनंत रंगाचार, डॉ० एन गोपाल पानीकर, डॉ० सुद्युम्न आचार्य, प्रो० केशव रामराव जोशी, डॉ० भगवान पंडा, डॉ० श्रीमती कमल आनंद, पण्डित बद्री प्रसाद शास्त्री, पं० अन्नादुर राजगोपाल चरियार, प्रो० रामचन्द्र पाण्डे, प्रो० अशोक कुमार कालिया, डॉ० समिरन चंद्र चक्रवर्ती तथा संस्कृत का अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान प्रो० शेलडान पोलाक को दिया जाएगा। डॉ० धर्मचंद्र जैन को पाली-प्राकृत, प्रो० शब्बीर नदवी, प्रो० शाह अब्दुस सलाम, प्रो० अबुलैस अंसारी को अरबी, प्रो० रेहाना खातून, डॉ० मोहम्मद यासीन कुद्दुसी, प्रो० सैयद मोहम्मद तारीक हसन को फारसी के लिए सम्मानित किया जाएगा।

इसके अतिरिक्त संस्कृत भाषा के विद्वान् डॉ० चंद्रभूषण झा, डॉ० मल्हार अरविंद कुलकर्णी, डॉ० सच्चिदानंद मिश्र, डॉ० नारायण दास और डॉ० शशिभूषण मिश्र तथा फारसी के डॉ० असद अली खुर्शीद को महर्षि व्यास सम्मान दिया जाएगा।

'ट-टा प्रोफेसर' का अंग्रेजी अनुवाद सम्मानित

वोडाफोन क्रॉसवर्ड पुरस्कार समारोह में स्वर्गीय मनोहर श्याम जोशी के उपन्यास 'ट-टा प्रोफेसर' के अंग्रेजी अनुवाद के लिए इस वर्ष का 'क्रॉसवर्ड पुरस्कार' (भारतीय भाषा अनुवाद श्रेणी) **इरा पाण्डे** को दिया गया है। 'ट-टा प्रोफेसर' मूलत: हिन्दी में लिखा गया था। समारोह की मुख्य अतिथि नयनतारा सहगल थीं।

अंग्रेजी कथा-साहित्य में **अमिताव घोष** को उनके उपन्यास 'सी ऑफ पॉपीज' तथा **नील मुखर्जी** को उनके उपन्यास 'पास्ट कॉन्टीन्यूअस' के लिए संयुक्त रूप से 'क्रॉसवर्ड पुरस्कार' दिया गया।

अंग्रेजी नॉन-फिक्शन श्रेणी में **वशारत पीर** को 'कर्फ्यूड नाइट्स' के लिए पुरस्कृत किया गया और **पल्लवी अय्यर** को 'पॉपुलर बुक अवार्ड' उनकी पुस्तक 'स्मोक एंड मिरर्स' के लिए दिया गया।

मधुप शर्मा : सारस्वत सम्मान

मुंबई के सराफ मातृ मन्दिर में आयोजित समारोह में वरिष्ठ कवि **मधुप शर्मा** का 'सारस्वत सम्मान समारोह' आयोजित किया गया। समारोह में कवि के पाँच काव्य-संग्रहों का लोकार्पण किया गया। नंदकिशोर नौटियाल की अध्यक्षता में विश्वनाथ सचदेव, डॉ० चंद्रप्रकाश द्विवेदी, राजनारायण सराफ सहित अनेक साहित्यकारों ने कवि के कृतित्व और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए आदर भाव प्रदर्शित किया।

कपूरचंद्र कुलिश इंटरनेशनल एवार्ड

नई दिल्ली। ताज पैलेस होटल में जयपुर के 'राजस्थान पत्रिका' समाचार-पत्र समूह द्वारा उसके संस्थापक कपूरचंद्र कुलिश की स्मृति में स्थापित 'के०सी० कुलिश इंटरनेशनल एवार्ड-2008 फॉर एक्सलेंस इन प्रिंट जर्नलिज्म' पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। 'आतंकवाद और समाज' विषयक रिपोर्ट के लिए इस अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार के लिए अमेरिका, फ्रांस, सर्विया, मॉरिशस, मिस्र, श्रीलंका, अफगानिस्तान और पाकिस्तान के समाचार-पत्रों में प्रकाशित कुल 173 प्रविष्टियों में से तीन को पुरस्कार हेतु चुना गया। हिन्दुस्तान टाइम्स के **हरिंदर बवेजा** की रिपोर्ट 'वेलकम टू द हेडक्वार्टर ऑफ लश्कर-ए-तैयबा' को प्रथम पुरस्कार दिया गया। हिन्दुस्तान टाइम्स के चंडीगढ़ संवाददाता **कँवर संधू**, हिन्दुस्तान, लखनऊ के विशेष संवाददाता **दयाशंकर शुक्ल सागर** और उनकी टीम के सदस्य **नीलमणि** तथा **नसीरुद्दीन**

पुरस्कार हेतु पुस्तकें आमन्त्रित

कवियित्री स्व० डॉ० सीता श्रीवास्तव जी (1924-2009) की स्मृति में उनके परिवार द्वारा कविता के लिए 51,000 रुपये राशि का पुरस्कार आरम्भ करने का निर्णय लिया गया है।

प्रथम 'सीता स्मृति पुरस्कार' हेतु वर्ष 2008 (1 जनवरी-31 दिसम्बर) में प्रकाशित पुस्तकों की दो-दो प्रतियाँ, लेखक/लेखिका के दो रंगीन चित्रों सहित भेजें। पुस्तकें भेजने की अन्तिम तिथि 15 दिसम्बर, 2009 है। लिफाफे पर 'सीता स्मृति पुरस्कार हेतु' अवश्य लिखें।

पुरस्कृत पुस्तक का चयन एक निर्णायक-मंडल द्वारा किया जाएगा।

यह पुरस्कार डॉ० सीता श्रीवास्तवजी की जन्मतिथि 7 फरवरी को हर वर्ष प्रदान किया जाएगा।

पुस्तकें निम्नलिखित पते पर भेजें—

वंदना राय/रश्मि मल्होत्रा, ए-75, शिवालिक, गीतांजलि रोड, नई दिल्ली-17

को 'इस आतंकवादी की खता क्या है' के लिए तथा हिन्दुस्तान टाइम्स, कोलकाता के संवाददाता **राहुल कर्माकर** को मेरिट एवार्ड दिया गया। यह पुरस्कार एक भव्य समारोह में लोकसभा की स्पीकर मीरा कुमार ने प्रदान किया।

उदयराज सिंह स्मृति सम्मान

विगत दिनों हिन्दी के प्रसिद्ध कवि **श्री कुँवर नारायण** को 'नई धारा' साहित्यिक पत्रिका द्वारा वर्ष 2009 का तृतीय 'उदयराज सिंह स्मृति सम्मान' देने की घोषणा की गई है, जिसके अन्तर्गत उन्हें *एक लाख रुपये* सहित सम्मान पत्र, स्मृति-चिह्न आदि अर्पित किये जाएँगे।

इब्राहिम अलकाजी को 'हिन्दीरत्न सम्मान'

विगत दिनों राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन की 128वीं जयंती के अवसर पर हिन्दी भवन में आयोजित एक भव्य समारोह में राष्ट्रभाषा हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के रंगमंच को नई पहचान और नए आयाम देनेवाले पुरोधा **श्री इब्राहिम अलकाजी** को पंडित भीमसेन विद्यालंकार स्मृति 'हिन्दीरत्न सम्मान-2009' से विभूषित किया गया। इस सम्मान के अन्तर्गत श्री अलकाजी को शॉल, प्रतीक चिह्न, प्रशस्ति पत्र, रजत श्रीफल और *एक लाख रुपए* की राशि भेंट की गई। समारोह के मुख्य अतिथि वरिष्ठ पत्रकार-साहित्यकार श्री कन्हैयालाल नंदन थे।

डॉ० बोरा को 'सरस्वती' व मन्नू भण्डारी को 'व्यास' सम्मान

के०के० बिरला फाउंडेशन के प्रतिष्ठापूर्ण 'सरस्वती सम्मान' तथा 'व्यास सम्मान' 4 सितम्बर को एक गरिमामय समारोह में प्रदान किये गये। वर्ष 2008 के लिए यह सम्मान असमिया के दृष्टिसम्पन्न रचनाकार **डॉ० लक्ष्मीनंदन बोरा** को उनके उपन्यास 'कायाकल्प' तथा हिन्दी की चर्चित कथा लेखिका **मन्नू भण्डारी** को उनकी आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' के लिए प्रदान किया गया। बीते 18 वर्षों में यह पहला अवसर है जब 'व्यास सम्मान' किसी आत्मकथा के लिए दिया गया है।

राष्ट्रीय संग्रहालय के सभागार में आयोजित समारोह की अध्यक्षता लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार ने की। 'सरस्वती पुरस्कार' में **डॉ० बोरा** को *पाँच लाख रुपये*, प्रशस्ति पत्र और प्रतीक चिह्न प्रदान किया गया। श्रीमती कुमार ने 'व्यास सम्मान' के तहत **मन्नू भण्डारी** को *ढाई लाख रुपये*, प्रशस्ति पत्र व प्रतीक चिह्न प्रदान किये।

मृदुला गर्ग को 'स्पंदन कथा शिखर सम्मान'

विगत दिनों साहित्य, संस्कृति तथा कलाओं के प्रोत्साहन के लिए समर्पित भोपाल की संस्था 'स्पंदन' द्वारा हिन्दी की प्रतिष्ठित कथा लेखिका **श्रीमती मृदुला गर्ग** को 'स्पंदन कथा शिखर सम्मान वर्ष 2009' के लिए चुना गया है। पुरस्कार के अन्तर्गत *इकतीस हजार रुपए* की राशि, शॉल, श्रीफल तथा स्मृति-चिह्न दिया जाता है। पुरस्कार दिसम्बर में भोपाल में एक भव्य समारोह में दिया जाएगा।

'केदार सम्मान' समारोह सम्पन्न

विगत दिनों इलाहाबाद में सम्पन्न भव्य कार्यक्रम में हिन्दी कविता के शीर्षस्थ कवि श्री केदारनाथ अग्रवाल की स्मृति में दिया जानेवाला 'केदार सम्मान' चर्चित कवि **श्री दिनेशकुमार शुक्ल** को उनके कविता संकलन 'ललमुनिया की दुनिया' के लिए प्रो० नामवर सिंह के हाथों प्रदान किया गया।

बारह लेखकों को सम्मानित किया गया

11 सितम्बर को भारतीय अनुवाद परिषद् की ओर से दिए जाने वाले प्रतिष्ठित 'नताली', 'द्विवागीश' और 'अनुवादश्री' पुरस्कार नई दिल्ली के त्रिवेणी सभागार में आयोजित एक समारोह में बारह विभिन्न लेखकों को प्रदान किए गए। पुरस्कार-स्वरूप प्रत्येक को *11 हजार नगद*, प्रतीक चिह्न, शॉल और प्रशस्ति-पत्र प्रदान किये गये। वर्ष 2007-08 का 'नताली पुरस्कार' **प्रो० सूरजभान सिंह** को 'डॉ० गार्गी गुप्त द्विवागीश पुरस्कार' **डॉ० हेमा जावडेकर** व **डॉ० दिविक रमेश** को प्रदान किया गया। इसी तरह वर्ष 2008-09 का 'नताली पुरस्कार' **श्री कुमार गोस्वामी**, 'अनुवादश्री' पुरस्कार **प्रो० शंकरलाल पुरोहित** और 'द्विवागीश' पुरस्कार **डॉ० अमरजीत कौर** व **श्री संतोष एलेक्स** को प्रदान किया गया। वर्ष 2009-10 का 'नताली पुरस्कार' **प्रो० हेमचंद पाण्डेय**, 'अनुवादश्री' पुरस्कार **श्री शांतिलाल नायर** और 'द्विवागीश पुरस्कार' **डॉ० रेखा व्यास** व **डॉ० तिप्ते स्वामी** को प्रदान किया गया। सम्मान मानव संसाधन मंत्रालय की संयुक्त सचिव श्रीमती अनीता भटनागर और सर्वांतेज इंस्टीट्यूट के निदेशक डॉ० ऑस्कर पुजौल ने प्रदान किया। अध्यक्षता प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हिमांशु जोशी ने की।

पुरस्कार घोषित

12 सितम्बर को डॉ० रत्नलाल शर्मा स्मृति न्यास के अध्यक्ष श्री शलभ शर्मा ने पन्द्रहवें 'श्रीमती रतनशर्मा स्मृति बाल साहित्य पुरस्कार' की घोषणा करते हुए कहा कि वर्ष 2009 के लिए यह प्रतिष्ठित पुरस्कार **श्री दिविक रमेश** को उनकी कृति 'एक सौ एक बाल कविताएँ' के लिए प्रदान किया जाएगा। पुरस्कार स्वरूप *31,000/-रु०*, प्रशस्ति-पत्र एवं प्रतीक-चिह्न प्रदान किया जाएगा। पुरस्कार समारोह 6 अक्टूबर, 2009 को त्रिवेणी कला संगम, दिल्ली में आयोजित किया जाएगा।

देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान

'देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान' हेतु 45 वर्ष की आयु तक के युवा आलोचकों की आलोचना की पुस्तक, पुस्तकें अथवा कोई लम्बे निबन्ध की दो-दो प्रतियाँ 15 दिसम्बर 2009 तक डॉ० कमलेश अवस्थी, संयोजक, श्याम सिंधु, 2/346ए, आजाद नगर, कानपुर-208002, दूरभाष 0512-2563198 के पते पर प्रेषित करें।

गोविंद पाल को 'सृजन सम्मान'

6 सितम्बर को भीलवाड़ा (राजस्थान) में आयोजित दो दिवसीय अखिलभारतीय बाल साहित्य संगोष्ठी में युवा बाल साहित्यकार **श्री गोविंद पाल** को बाल साहित्य में उल्लेखनीय कार्य के लिए राष्ट्रीय बाल पत्रिका 'बाल वाटिका' की ओर से 'राष्ट्रीय बाल वाटिका सृजन सम्मान' के साथ शॉल, श्रीफल, सम्मान-पत्र, प्रतीक चिह्न एवं सम्मान राशि भेंट की गई। समारोह में अजमेर के पुलिस महानिदेशक श्री आर०पी० सिंह मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। अध्यक्षता प्रख्यात साहित्यकार डॉ० शकुंतला कालरा ने की। सर्वश्री हुमराज बलवाणी, हेमराज जी राठौर, भैंरूलाल गर्ग तथा जगदीशजी मानसिंगा उपस्थित रहे।

कुँवर नारायण को 'ज्ञानपीठ पुरस्कार'

यशस्वी कवि **कुँवर नारायण** को 6 अक्टूबर को साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान हेतु 41वें 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मान किया गया। राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने संसद के बालयोगी सभागार में आयोजित एक समारोह में उन्हें यह पुरस्कार दिया। जिसके अन्तर्गत उन्हें *7 लाख रुपये* की राशि, वनदेवी की प्रतिमा, प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न और शॉल व श्रीफल देकर सम्मानित किया गया।

उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जिले में 19 सितम्बर 1927 को जन्मे कुँवर नारायण का पहला कविता संग्रह 'चक्रव्यूह' 1956 में छपा था। अब तक उनके छः कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'आत्मजयी' और 'वाजश्रवा के बहाने' उनके चर्चित खण्डमहाकाव्य हैं। उन्होंने विदेशी साहित्य का भी अनुवाद किया है।

उड़ीसा के प्रसिद्ध कवि और 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' विजेता सीताकांत महापात्र की अध्यक्षता वाली समिति ने इस पुरस्कार के लिए कुँवर नारायण का चयन किया था।

नंदकिशोर त्रिखा को सम्मान

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल द्वारा स्थापित 'गणेश शंकर विद्यार्थी पत्रकारिता सम्मान' इस वर्ष **प्रो० नन्दकिशोर त्रिखा** को दिया जाएगा।

संगोष्ठी/लोकार्पण

85 के हुए रामदरश मिश्र

15 अगस्त 2009 को रामदरश मिश्र ने जीवन के 85 वर्ष पूरे किए। इस अवसर पर उनके अनेक आत्मीय बन्धु साहित्यकार उन्हें बधाई और शुभकामना देने के लिए उनके निवास स्थान पर एकत्र हुए और सहज ही एक साहित्यिक गोष्ठी-सी निर्मित हो गयी। शुरू में संवेदनशील कवयित्री डॉ० सविता मिश्र का डी०लिट० का शोध ग्रन्थ 'समकालीन काव्य परिदृश्य और रामदरश मिश्र का काव्य' प्रख्यात कवि, नाटककार और आलोचक डॉ० विनय के द्वारा लोकार्पित हुआ। इस अवसर पर मिश्रजी की तीन नई पुस्तकों, (1) काव्य-संग्रह 'कभी कभी इन दिनों', (2) '21 श्रेष्ठ कहानियाँ' तथा (3) 'बालकथा-संग्रह : यादें कुछ बचपन की' का लोकार्पण भी हुआ।

अनुवाद में नहीं आता सम्पूर्ण 'स्व'

अनुभवों से व्यक्ति का 'स्व' निर्मित होता है। उससे उपजे किसी विचार को जब वह अभिव्यक्त करता है तो भाषा के माध्यम से व्यक्त होते समय उसका बहुत कुछ छूट जाता है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, साहित्य अकादेमी और ज्ञान प्रवाह के सहयोग से आयोजित संगोष्ठी में देश की विभिन्न भाषाओं के मूर्धन्य साहित्यकारों ने 'स्व' की इसी गुत्थी को समझने का प्रयास किया। 'स्व और उसका अनुवाद : लिखित पाठ के बारे में नई सोच और अन्य भारतीय कला रूपों से उसका सम्बन्ध' विषयक संगोष्ठी हुई।

भारतीय संस्कृति का आदर्श

दूसरे विश्वयुद्ध में विनाश का दंश सहने के बाद प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जापान विश्व में अगुवा बन तो गया लेकिन मानसिक शांति देनेवाली संस्कृति लुप्त हो गई। हर वर्ष वहाँ बड़ी संख्या में लोग खुदकुशी कर रहे हैं। ऐसे में वहाँ के लोगों के लिए जरूरत भारतीय संस्कृति से प्रेरणा लेने की है। यह उद्‌गार भारत दौरे पर आई जापानी प्राध्यापिका रोको तेरानीशी ने व्यक्त किये। वह काशी विद्यापीठ के गाँधी अध्ययन पीठ में भारतीय और जापानी संस्कृति विषयक गोष्ठी को बतौर मुख्य अतिथि सम्बोधित कर रही थीं। उन्होंने कहा कि भारतीय नारी बाकी दुनिया के लिए मिसाल है। इसके गुणों को आत्मसात किया जाए तो दुनिया में तलाक, बेमेल विवाह और परिवारों का बिखराव काफी हद तक काबू में किया जा सकता है।

विश्व हिन्दी संग्रहालय एवं अभिलेखन केन्द्र में संग्रहकार्य एवं दस्तावेजीकरण जारी

उज्जैन। विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन की हिन्दी अध्ययनशाला में स्थापित विश्व हिन्दी संग्रहालय एवं अभिलेखन केन्द्र में केन्द्र के समन्वयक तथा हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो० शैलेन्द्रकुमार शर्मा के कुशल निर्देशन में संग्रहकार्य, सर्वेक्षण एवं दस्तावेजीकरण जारी है। विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हिन्दी के बहुकोणीय रेखांकन के लिए फरवरी 2007 में स्थापित इस संग्रहालय एवं अभिलेखन केन्द्र में विगत एक हजार वर्षों के हिन्दी साहित्य के महत्त्वपूर्ण पक्षों को प्रस्तुत करने के साथ ही साहित्यकार चित्र दीर्घा, रचनाकारों के हस्तलेख, दुर्लभ साहित्यिक एवं शोध पत्रिकाएँ, महत्त्वपूर्ण साहित्यिक पत्रिकाओं के विशेषांक, देश-विदेश के विभिन्न भागों से प्रकाशित हिन्दी समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ, प्रकाशन सूचियाँ, अनुसंधान सूचनाएँ एवं अन्य आधार सामग्री को संजोया गया है।

भोपाल के हिन्दी भवन में 'हिन्द स्वराज' पर सोलहवीं पावस व्याख्यान माला सम्पन्न

भोपाल। मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा समसामयिक और साहित्यिक विषयों पर राष्ट्रीय स्तर के विमर्श के लिये हर वर्ष आयोजित होने वाली तीन व्याख्यान मालाओं के क्रम में सोलहवीं पावस व्याख्यान माला हिन्दी भवन में 7 से 9 अगस्त तक आयोजित हुई। यह मुख्य रूप से महात्मा गाँधी की बहुचर्चित ऐतिहासिक पुस्तक 'हिन्द स्वराज' पर केन्द्रित रही। व्याख्यान माला के अन्तर्गत उद्‌घाटन सत्र सहित छह सत्र आयोजित हुए जिनमें से तीन सत्रों में *हिन्द स्वराज, गाँधी की वैचारिक दृष्टि* और *उत्तर आधुनिकता* पर तथा दो सत्रों में *हिन्दी नाटकों की वर्तमान दशा और उनकी दिशा* पर विचार विमर्श हुआ। अन्तिम सत्र में *हिन्दी साहित्य में सांस्कृतिक दृष्टि का निवेश* विषय पर विद्वानों ने विचार मंथन किया। व्याख्यान माला का उद्‌घाटन करते हुए शीर्षस्थ साहित्य मनीषी डॉ० कृष्णदत्त पालीवाल ने कहा कि गाँधी हमारी परम्परा के ऐसे विरले चिन्तक हैं जो प्रकाश के साथ-साथ अंधकार को भी दूर तक देखते थे।

कन्हैयालाल नन्दन की पुस्तक का लोकार्पण

नई दिल्ली। रचनाकार-पत्रकार अपनी जीवन यात्रा में कई ऐसे पड़ावों से होकर गुजरता है जहाँ वह बहुत कुछ कहना चाहता है। रवीन्द्र कालिया जैसे कुछ लोग खरी-खोटी बातों के लिए इस *काले रजिस्टर* को बिना किसी परवाह के सबके सामने रख देते हैं, तो कन्हैयालाल नन्दन जैसे लोग साहस व ईमानदारी के बावजूद उस कशमकश से बाहर निकलने का इंतजार करते हैं जो उन्हें अपने आदर्श (धर्मवीर भारती) के खिलाफ लिखने बोलने को खड़ा करता है। श्री नन्दन के 76वें जन्मदिन पर हिन्दी भवन में आयोजित उनकी आत्मसंस्मरणों की पुस्तक 'कहना जरूरी था' के लोकार्पण समारोह की अध्यक्षता करते हुए हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार महीप सिंह ने कहा। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि रामदरश मिश्र थे।

संवाद-लेखन और सम्पादन

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पत्रकारिता और जनसम्पर्क विभाग की ओर से 'समाचार संकलन, लेखन और सम्पादन' विषयक कार्यशाला का 21 अगस्त को आयोजन किया गया । 'हिन्दुस्तान' के स्थानीय सम्पादक रविशंकर पंत ने कहा कि समाचार संकलन अखबार की रीढ़ है। खबर बनाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह दूसरों से अलग हो और इसके लिए विषय गहन जानकारी आवश्यक है। आज का समय विशेषीकृत पत्रकारिता का है इसलिए छात्रों को व्यापार, स्पोर्टस आदि में महारत हासिल करनी चाहिए। खबर हर दृष्टि से पूर्ण होनी चाहिए। कुलपति प्रो० डीपी सिंह ने कहा कि पढ़ने का जुनून और विश्लेषण करके आपस में चर्चा कर निष्कर्ष निकालने की विशिष्टता पत्रकारिता के लिए आवश्यक है। कला संकाय प्रमुख प्रो० कमलशील ने कहा कि इलेक्ट्रानिक और प्रिंट मीडिया एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी न होकर पूरक हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 125वीं जयंती

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 125वीं जयंती के अवसर पर एकदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन साहित्य अकादेमी के सभागार में 4 अगस्त को सम्पन्न हुआ।

चार सत्रों में आयोजित इस कार्यक्रम का उद्‌घाटन भाषण प्रो० नामवर सिंह ने दिया।

उद्‌घाटन सत्र का आरम्भिक वक्तव्य हिन्दी सलाहकार समिति के संयोजक डॉ० विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने दिया। उन्होंने कहा कि आचार्य शुक्ल पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने हिन्दी आलोचना को व्यवस्थित और वैज्ञानिक रूप दिया।

आचार्य शुक्लजी के परिवार की सदस्य मुक्ताजी ने शुक्लजी के पारिवारिक जीवन के संस्मरण सुनाए और उनके विविध रूपों (इतिहासकार, आलोचक, कवि, अध्यापक, सहृदय पिता) की चर्चा की। प्रो० नामवर सिंह ने कहा कि 20वीं सदी में पूरे भारत में आचार्य शुक्ल से बड़ा आलोचक नहीं हुआ, रचनाकार भले हुए हों। प्रो० सिंह ने आचार्य शुक्ल को आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्त और मम्मट की परम्परा का आचार्य बताते हुए कहा कि इनसे पहले आलोचना भावोच्छ्वास थी, अहावादी आलोचना थी, इन्होंने पहली बार आलोचना का शास्त्र विकसित किया।

उद्‌घाटन सत्र के अध्यक्ष डॉ० इन्द्रनाथ चौधुरी ने कहा कि शुक्लजी सबसे ज्यादा महत्त्व 'विचारों की स्वाधीनता' को दे रहे थे और हिन्दी का स्वतन्त्र शास्त्र निर्मित करने के लिए प्रयासरत थे।

पहले सत्र की अध्यक्षता श्री विजेन्द्रनारायण सिंह ने की। इस सत्र में शुक्लजी के 'काव्यालोचन' पर चर्चा हुई। विजेन्द्रनारायण सिंह

ने कहा कि आचार्य शुक्ल ने कविता की परिभाषा गढ़ने से पहले मनुष्यता की परिभाषा गढ़ी थी और उनकी मनुष्यता के भीतर पक्षी, पशु, प्रकृति इन सब का प्रवेश था। वह सिर्फ मानववाद न था।

अगले सत्र में शुक्लजी की इतिहास दृष्टि पर चर्चा हुई जिसकी अध्यक्षता डॉ० रमेश कुंतल मेघ ने की। अपने वक्तव्य में प्रो० मैनेजर पाण्डेय ने कहा कि आज जरूरत इस बात की है कि शुक्ल के इतिहास से सीखते हुए एक नया वृहत इतिहास लिखा जाए जिसमें स्त्री, दलित लेखन को शामिल किया जाए और भारत के तथा भारत के बाहर हो रहे हिन्दी लेखन को इसमें स्थान दिया जाए।

रमेश कुंतल मेघ ने भी शुक्लजी के प्रकृति प्रेमी रूप को रेखांकित किया।

अन्तिम सत्र की अध्यक्षता डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी ने की और इस सत्र में 'रामचंद्र शुक्ल और परवर्ती हिन्दी आलोचना' पर चर्चा हुई। इस सत्र में डॉ० गोपाल राय ने रामचंद्र शुक्ल की परवर्ती हिन्दी कहानी आलोचना पर अपना विमर्श प्रस्तुत किया, जबकि डॉ० कृष्णदत्त पालीवाल ने काव्यालोचना पर। डॉ० ज्योतिष जोशी ने अपने विचार रखते हुए कहा कि आचार्य शुक्ल की परवर्ती आलोचना में उनके जैसी समग्रता नहीं है, वह एकांगी है। डॉ० त्रिपाठी ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कहा कि आचार्य शुक्ल के परवर्ती आलोचक उनसे टकराकर ही नवीन प्रस्थान करते हैं।

सादगी और अनुशासन ही असली सृजनशीलता है

गाँधीजी ने सादगी और अनुशासन के सहारे बड़े-बड़े असाधारण काम बड़े साधारण तरीके से कर दिखाए थे.... आज हम भारत का निर्माण गाँधीजी की सोच के साथ करना चाहते हैं या पाश्चात्य मूल्यों के साथ यह हमें तय करना होगा.... उक्त विचार श्रीमती शीला दीक्षित ने महात्मा गाँधी द्वारा लिखित पुस्तकों 'हिन्द स्वराज' और 'सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा' के लोकार्पण समारोह में कहीं। हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित इन पुस्तकों के विमोचन समारोह में वरिष्ठ पत्रकार श्री प्रभाष जोशी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि आज की दुनिया बनाने वाली तीन किताबों में से एक पुस्तक गाँधीजी की 'हिन्द स्वराज' है। सौ वर्ष पहले लिखी गयी इस किताब को आज भी पश्चिमी समाज उनके बारे में की गई सबसे रचनात्मक आलोचना मानता है। इससे पहले हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष प्रो० अशोक चक्रधर ने कहा कि यह दोनों पुस्तकें युगांतकारी हैं, उन्होंने भारतीय समाज की दशा बदलकर हमें नई राहें दिखाई हैं।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में 'असली स्वराज ही स्वाधीनता है' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता जामिया मिल्लिया इस्लामिया के कुलपति प्रो० मुशीरुल हसन ने की।

तृतीय सत्र में 'जीवन की सच्चाइयाँ : आत्मावलोकन व सृजनशीलता' विषय पर आयोजित संगोष्ठी की अध्यक्षता वरिष्ठ समालोचक प्रो० नामवर सिंह ने की। अध्यक्षीय भाषण में प्रो० नामवर सिंह ने हिन्दी अकादमी को साहित्य से इतर इन दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के प्रकाशन पर बधाई देते हुए कहा कि गाँधीजी के कारण ही हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

पं० कृष्णदेव उपाध्याय जन्मशती समारोह

अखिल भारतीय नवोदित साहित्यकार परिषद् (सम्बद्ध अ०भा०सा० परिषद-दिल्ली) तथा भारतीय साहित्य लोक संस्कृति संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में भोजपुरी के प्रकांड पंडित डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय जन्मशती समारोह का आयोजन वाराणसी में हुआ। विषय की स्थापना करते हुए पंडित जी के अन्तिम शिष्य अखिल भारतीय नवोदित साहित्यकार परिषद् के राष्ट्रीय सहसंयोजक डॉ० राजकुमार उपाध्याय 'मणि' ने कहा कि डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय भोजपुरी के प्रथम अनुसंधाता हैं जिन्होंने 'भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन' नामक शोध-प्रबन्ध के द्वारा भोजपुरी की ओर विद्वानों का ध्यानाकर्षण किया। पंडितजी ने भोजपुरी साहित्य का इतिहास लिखकर इसके साहित्य की परम्परा स्थापित की इसलिए वे प्रथम साहित्येतिहास लेखक भी कहे जाते हैं। उन्होंने अपने जीवन के पाँच दशकों तक भोजपुरी और लोक साहित्य की सेवा करके दर्जनों ग्रन्थों का निर्माण किया और लोक साहित्य को साहित्यशास्त्र की श्रेणी में स्थापित किया, इसलिए वे लोकसाहित्य के शास्त्राचार्य थे।

अप्रवासी प्रतिनिधि कहानियाँ

नई दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में अकादेमी के तत्वावधान में आयोजित समारोह में वरिष्ठ कहानीकार हिमांशु जोशी द्वारा सम्पादित भारत से बाहर सात समुद्र पार देशों में रह रहे प्रवासी हिन्दी रचनाकारों की 48 कहानियों का संग्रह 'अप्रवासी प्रतिनिधि कहानियाँ' का लोकार्पण डॉ० कपिला वात्स्यायन ने किया। समारोह की अध्यक्षता प्रो० नामवर सिंह ने की। उल्लेखनीय है, डॉ० नामवर सिंह की पहल पर इस कहानी-संग्रह का सम्पादन अकादेमी द्वारा कराया गया और प्रकाशित किया गया है।

युवा रचनाशीलता और नैतिक मूल्य

नई दिल्ली के एवान-ए-गालिब के सभागार में मासिक पत्रिका 'हंस' द्वारा 'प्रेमचंद जयंती' और हंस की 24वीं वर्षगाँठ पर 'युवा रचनाशीलता और नैतिक मूल्य' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में डॉ० नामवर सिंह, अशोक वाजपेयी, हंस के संपादक राजेंद्र यादव, अरुंधति राय, अल्पना मिश्र, अजय नावरिया और वैभव सिंह ने चिंता जताई कि आज के युवा लेखकों से राम की शक्ति पूजा, शेखर : एक जीवनी, कामायनी, सूरज का सातवाँ घोड़ा और अंधा युग जैसी रचना क्यों नहीं आती, जिन्हें इनके लेखकों ने युवावस्था में ही लिखा था।

इस अवसर पर सुपरिचित कथाकार मैत्रेयी पुष्पा को तीसरे 'सुधा साहित्य सम्मान-2009' से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का संचालन साहित्यकार संजीव ने किया।

जिन्ना : भारत-विभाजन के आईने में

नई दिल्ली के नेहरू स्मृति पुस्तकालय के सभागार में आयोजित समारोह में वरिष्ठ राजनेता जसवंत सिंह की पुस्तक 'जिन्ना : भारत-विभाजन के आईने में' का लोकार्पण किया गया। समारोह में एम०जे० अकबर, जार्ज वर्गीज, राम जेठमलानी, लार्ड मेघनाथ देसाई, मार्क टुली, डॉ० नामवर सिंह, हामिद हारून आदि ने अपने-अपने विचार रखे।

आडवाणी की जीवनी उर्दू में

नई दिल्ली के फिक्की सभागार में आयोजित समारोह में लालकृष्ण आडवाणी की जीवनी 'मेरा देश : मेरा जीवन' के उर्दू संस्करण का लोकार्पण पत्रकार एम०जे० अकबर ने किया।

पूर्व राष्ट्रपति कलाम द्वारा 'एक मुलाकात बहादुर बच्चों के साथ' का विमोचन

पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने अपने निवास पर संजीव गुप्ता की 'एक मुलाकात बहादुर बच्चों के साथ' नामक पुस्तक का विमोचन किया। इस पुस्तक में राष्ट्रीय वीरता पुरस्कारों से सम्मानित बच्चों के साथ किए गए साक्षात्कार सम्मिलित हैं। इस अवसर पर बोलते हुए डॉ० कलाम ने कहा कि दूसरों की जान बचाने से बड़ा परोपकार कोई नहीं है। इसे इंसान ही नहीं, ईश्वर भी देखते हैं।

नंददुलारे वाजपेयी जन्मशती संगोष्ठी

साहित्य अकादेमी, दिल्ली और भारतीय भाषा परिषद कोलकाता के संयुक्त तत्वावधान में हिन्दी के प्रतिष्ठित आलोचक आचार्य नंददुलारे वाजपेयी की जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर परिषद सभागार में एक द्विदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन 5-6 सितम्बर 2009 को कोलकाता में किया गया। उद्घाटन सत्र सहित सात सत्रों में विभाजित इस संगोष्ठी के उद्घाटन अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र ने कहा कि साहित्य में राजनीति का हस्तक्षेप नहीं वरन् राजनीति में साहित्य का हस्तक्षेप होना चाहिए—ऐसा वाजपेयी जी का मानना था। इस अवसर पर बीज भाषण देते हुए परिषद के निदेशक और कवि-आलोचक डॉ० विजय बहादुर सिंह ने कहा कि वाजपेयी जी अपने समय में उस भविष्य को देख रहे थे जो घटित होने वाला था। वह कहते थे कि मैं सृजनशील आलोचक हूँ, संरक्षणशील आलोचक नहीं।

अपने आरम्भिक व्याख्यान में अकादेमी के हिन्दी परामर्श मण्डल के संयोजक और कवि आलोचक डॉ० विश्वनाथप्रसाद तिवारी ने कहा कि नंददुलारे वाजपेयी जी की आलोचना के तीन प्रमुख आधार हैं—राष्ट्रीयता, लोकतंत्र और मनुष्य के भीतर की उदात्त चेतना। यही तीन आधार हम छायावाद और महात्मा गाँधी के 'हिन्द स्वराज' में भी पाते हैं।

संगोष्ठी का प्रथम सत्र 'राष्ट्रीय साहित्य की अवधारणा और आचार्य नंददुलारे वाजपेयी' विषय पर केन्द्रित था। जिसकी अध्यक्षता डॉ० इंद्रनाथ चौधुरी ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ० चौधुरी ने कहा कि वाजपेयी जी अविच्छिन्नता में भारतीय साहित्य के महत्त्व को देख रहे थे एक तरह से यह समूचे भारत को देखने की दृष्टि है।

संगोष्ठी का दूसरा सत्र 'प्रेमचंद, आचार्य शुक्ल, प्रसाद और निराला के सन्दर्भ में नंददुलारे वाजपेयी' विषय पर केन्द्रित था जिसकी अध्यक्षता कर रहे डॉ० शिवकुमार मिश्र ने कहा कि आचार्य वाजपेयी आचार्य शुक्ल के विरोधी होते हुए भी अपनी आलोचना में शुक्लजी के करीब आ रहे थे।

संगोष्ठी का तृतीय सत्र 'भारतीय काव्य शास्त्र और नंददुलारे वाजपेयी' विषय पर केन्द्रित था, जिसकी अध्यक्षा डॉ० कमलेश दत्त त्रिपाठी ने की। उन्होंने कहा कि—वाजपेयी जी अपनी तरह के एक ऐसे समीक्षक रहे हैं, जिन्होंने प्राचीन आधार के साथ-साथ अंग्रेजी को भी स्वीकार करते हुए अपनी राह बनाई है।

संगोष्ठी का चौथा सत्र 'नंददुलारे वाजपेयी और साहित्य' पर केन्द्रित था। इसकी अध्यक्षता डॉ० रमेश दवे ने की। उन्होंने कहा कि जब किसी व्यक्ति का विचार विचारधारा में बदल जाता है, तब उस विचारधारा में व्यक्ति विलीन हो जाता है। वाजपेयी जी न होते तो शायद छायावादी कविताओं के सही मूल्यांकन में सैकड़ों वर्ष लग जाते।

संगोष्ठी का पाँचवाँ सत्र 'आलोचना का स्वदेश' विषय पर केन्द्रित था, जिसकी अध्यक्षता डॉ० नंदकिशोर आचार्य ने की। उन्होंने कहा कि आलोचना का स्वदेश साहित्य के स्वदेश से बाहर नहीं हो सकता। आलोचना का स्वदेश उसकी ज्ञान-मीमांसा है। वाजपेयीजी साहित्य के स्वदेश के पक्षधर हैं। हमें आलोचना के प्रतिमानों की नहीं प्रक्रिया की जरूरत है।

संगोष्ठी का अन्तिम सत्र 'आचार्य नंददुलारे वाजपेयी की पत्रकारिता और सम्पादन कला' पर केन्द्रित था, जिसकी अध्यक्षता माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलपति और चर्चित पत्रकार डॉ० अच्युतानंद मिश्र ने की। उन्होंने कहा कि आज के दौर में पत्रकारिता में साहित्य खारिज हो गया है। पत्रकारिता और साहित्य के सम्बन्धों को पुन: कैसे स्थापित किया जाए, यह सोचने और समझने की बात है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी साहित्य और पत्रकारिता के बीच सेतु पुरुष की तरह थे।

'अमृतलाल नागर रचना संचयन' का लोकार्पण

नागरजी की 94वीं जयन्ती के अवसर पर निराला सभागार, हिन्दी संस्थान, लखनऊ में डॉ० शरद नागर के सम्पादन में प्रकाशित 'अमृतलाल नागर रचना संचयन' का लोकार्पण प्रख्यात हिन्दी आलोचक और 'पूर्वग्रह' पत्रिका के सम्पादक डॉ० प्रभाकर श्रोत्रिय ने किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता साहित्य अकादेमी में हिन्दी परामर्श मण्डल के संयोजक और कवि-आलोचक डॉ० विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने की।

डॉ० श्रोत्रिय ने इस अवसर पर कहा कि यह संचयन उस खिड़की की तरह है, जिसके माध्यम से हम नागरजी के आसमान की तरह विस्तृत साहित्य की झलकियाँ देख सकते हैं।

उत्तरआधुनिकता क्या थी/है ?

उत्तरआधुनिकता क्या थी/है ? विषय पर दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में एक परिसंवाद का आयोजन किया गया। इस परिसंवाद की अध्यक्षता साहित्य अकादेमी के उपाध्यक्ष डॉ० सुतिन्दर सिंह नूर ने की। परिसंवाद में विशिष्ट अतिथि के रूप में कैलाश वाजपेयी ने और वक्ता के रूप में डॉ० सुधीश पचौरी एवं डॉ० तुतुन मुखर्जी ने अपने विचार रखे।

कार्यक्रम का प्रारम्भ करते हुए डॉ० सुतिन्दर सिंह नूर ने उत्तर आधुनिकता से जुड़े तमाम पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए इसके भारतीय एवं पाश्चात्य सन्दर्भों को रेखांकित किया।

डॉ० सुधीश पचौरी ने उत्तर आधुनिकता की संकल्पना के अतिविस्तार को रेखांकित करते हुए कहा कि भारत में शुरू होने वाले अस्मिता विमर्श, दलित-स्त्री विमर्श, भाषा संचेतना आदि की स्वीकार्यता उत्तर आधुनिकता की स्वीकार्यता है।

डॉ० तुतुन मुखर्जी ने आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के सम्बन्धों की व्याख्या की। उन्होंने कहा कि उत्तर आधुनिकता के कारण चीजों के बीच का भेद कम होता गया है। यहाँ तक कि गद्य और पद्य का भी फर्क कमजोर हुआ है। आज कविता कहानी जैसी और कहानी कविता जैसी होने लगी है। सामान्य और असामान्य (नार्मल और एब्नार्मल) स्थितियों की तुलना आधुनिकता और उत्तरआधुनिकता से करते हुए उन्होंने उदाहरणों के साथ अपनी बात रखी। उन्होंने कहा कि उत्तरआधुनिकता के लिए सत्य यूनिर्वसल नहीं कम्पेरेटिव होता है। वह सच और यथार्थ के पार जाता है।

डॉ० कैलाश बाजपेयी ने कहा कि परम्परा के प्रयोग से आधुनिकता का जन्म होता है। उन्होंने भारतीय परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता को पारिभाषित करते हुए उसके विभिन्न आयामों को विस्तार से श्रोताओं के समक्ष रखा।

'हिन्दी पाठ रचना' का आयोजन

हिन्दी भाषा व साहित्य को बढ़ावा देने के लिए साहित्यकारों को एक मंच पर लाने के उद्देश्य से 'हिन्दी पाठ रचना' का आयोजन राष्ट्रीय साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली द्वारा चण्डीगढ़ में किया गया।

इस समारोह को चार सत्रों में बाँटा गया था। जिनमें दो कविता और दो कहानी के सत्र शामिल थे। प्रथम सत्र कविता पाठ का था, जिसकी अध्यक्षता श्री विश्वनाथप्रसाद तिवारी ने की। कार्यक्रम के दूसरे सत्र, कहानी सत्र की अध्यक्षता प्रो० वीरेन्द्र मेहंदीरत्ता ने की। तीसरे सत्र (कविता) की अध्यक्षता कैलाश वाजपेयी ने की। अन्तिम सत्र (कहानी) की अध्यक्षता कमल कुमार ने की।

'आगामी पल का निर्माण' का लोकार्पण

29 अगस्त 2009 को नई दिल्ली स्थित इण्डिया इंटरनेशनल सेंटर के सभागार में डॉ० ए०जे० थॉमस की अंग्रेजी कविताओं के हिन्दी अनुवाद संकलन 'आगामी पल का निर्माण' का लोकार्पण वरिष्ठ हिन्दी कवि डॉ० केदारनाथ सिंह ने किया। इस अवसर पर ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित हिन्दी कवि कुंवर नारायण, साहित्य अकादेमी के सचिव श्री अग्रहार कृष्णमूर्ति और कवि-कथाकार डॉ० गंगाप्रसाद विमल ने संग्रह पर अपने विचार व्यक्त किए।

मानस-अनुशीलन का दूसरा समावेश चेन्नई में सम्पन्न

साहित्यानुशीलन समिति ने रविवार, 6 सितम्बर 2009 को कवि-शिरोमणि तुलसी रचित रामचरितमानस के अनुशीलन का द्वितीय समावेश आयोजित किया। वयोवृद्ध साहित्य प्रेमी समाजसेविका श्रीमती सी०बी० प्रसाद (पूर्व जे०पी०) ने समारोह की अध्यक्षता की। मद्रास विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रमुख डॉ० चिट्टी अन्नपूर्णा विशिष्ट अतिथि थीं। समिति-अध्यक्ष डॉ० इन्दरराज वैद ने बताया कि मानस-अनुशीलन का प्रथम समावेश गत दो अगस्त को आहूत था जिसमें बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड और किष्किन्धाकाण्ड पर विद्वान् अनुशीलकों ने अपने प्रपत्रों का वाचन किया था। अनुशीलन के क्रम को आगे बढ़ाते हुए मानस के सुन्दरकाण्ड पर, मानस के लंकाकाण्ड पर, मानस के उत्तरकाण्ड पर विद्वान साहित्यकारों ने अपने गम्भीर विवेचनात्मक-अनुशीलन आलेख प्रस्तुत किये। विशिष्ट अतिथि डॉ० चिट्टी अन्नपूर्णा ने आधुनिक सन्दर्भ में मानस की महत्ता और मूल्यवत्ता की सारगर्भित विवेचना की।

कबीर में गहरी प्रश्नाकुलता

''कबीर में काल और अकाल का द्वंद्व है। कबीर में गहरी प्रश्नाकुलता है। उनमें बहुवचनात्मकता भी है।'' उक्त विचार डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी ने हिन्दी अकादमी द्वारा कबीर पर आयोजित कार्यक्रम में बोलते हुए व्यक्त किये। कबीर ने निर्गुण भक्ति के एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर इशारा किया। उन्होंने कहा कि निगुर्ण भक्ति के ज्यादातर कवि केवल भक्ति ही नहीं अपनी रोजी-रोटी भी कमाते है। इसीलिए कबीर दास हर उस सम्प्रदाय की निंदा करते हैं जो अपनी रोजी-रोटी खुद न कमाते हों। अपनी रोजी-रोटी खुद कमाने और फिर लिखने से जो ताकत मिलती है वह सच्चाई ही प्रकट करती है। और ऐसा लेखक हमेशा 'याचक' नहीं बल्कि 'दाता' होता है।

प्रो० अशोक चक्रधर ने कबीर को चेत, चेतना, चेतावनी, चैतन्य का कवि बताया। वे अनपढ़ होते भी सबसे ज्यादा ज्ञानी हैं। लेकिन ज्ञान का वितण्डा नहीं दिखाते। कर्मकाण्ड के विरोधी कबीर ज्ञानकाण्ड के भी विरोधी हैं। उन्होंने कबीर को जीवन में उतारने की अपील करते हुए कहा कि हमें कबीर की कविता को पकड़कर चलना चाहिए।

इसके बाद प्रख्यात नृत्यांगना ज्योति श्रीवास्तव ने कबीर के कई पदों—'राम रहीम एक है दोनों', 'घूघँट के पट खोल सखी री', 'अरे मौको कहाँ ढूढे रे बंदे मैं तेरे पास में', 'भजो राम गोविंद हरे' पर ओडिसी नृत्य प्रस्तुत किया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 160वीं जयन्ती

विगत दिनों नागरी प्रचारिणी सभा में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 160वीं जयन्ती पर आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि साहित्यकार डॉ० शितिकंठ मिश्र ने कहा, ''देश का समग्र विकास करने के लिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल' का मूलमंत्र हमे आत्मसात करना होगा। ऋषि पंचमी को जन्मे हिन्दी के महान ऋषि भारतेन्दु ने देश हित के लिए इस तरह कुछ मंत्रों का दर्शन किया था जिनका अनुसरण होना चाहिए।''

अध्यक्षीय सम्बोधन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग के प्रो० महेन्द्रनाथ राय ने कहा कि भारतेन्दु जैसा विराट व्यक्तित्व आधुनिक हिन्दी साहित्य में कोई दूसरा नहीं हुआ। संस्कृत विश्वविद्यालय के प्रति कुलपति प्रो० रामजी मालवीय ने कहा कि साहित्य की कोई ऐसी परम्परा व प्रवृत्ति नहीं जो आधुनिक युग के प्रवर्तक भारतेन्दु के साहित्य में न दिखलाई पड़ती हो। प्रो० गिरीश चन्द्र चौधरी ने भारतेन्दु की भाषा निष्ठा को रेखांकित किया। चंडीगढ़ विश्वविद्यालय के पूर्व आचार्य डॉ० गुरुमैता ने कहा कि छोटी सी जिन्दगी में भारतेन्दु ने विविध रचनाओं के जरिए भारतीय पुनर्जागरण में महान योगदान दिया।

पाठकों के पत्र

'भारतीय वाङ्मय' का अगस्त अंक मिला। कविता 'पुस्तक-विलाप' और मोदीजी का संस्मरण, 'कविजी आओ.....' पसन्द आया। उस जमाने के कवि-सम्मेलनों की यादें ताजा हो आईं। अब कहाँ वे कवि, कहाँ वैसे कवि-सम्मेलन?

—डॉ० सन्तकुमार टण्डन 'रसिक', इलाहाबाद

स्व० पुरुषोत्तमदासजी का असीम स्नेह ही है कि 'भारतीय वाङ्मय' नियमित पढ़ रहा हूँ। मैं समृद्ध होता हूँ। मैं सन्तुष्ट होता हूँ।

—चंद्रदेव सुभद्रा भगवंत राव, औरंगाबाद

'भारतीय वाङ्मय' का जून-जुलाई अंक मिला और आद्यांत देख गया। हृदय से आभारी हूँ।

भाई अमरनाथजी की पूरी अपील और आपके सम्पादकीय में व्यक्त यह विचार कि 'प्रत्येक राज्य के प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक की शिक्षा का माध्यम मातृभाषा बने, न कि गुलाम मानसिकता की प्रतीक अंग्रेजी'—राष्ट्रीयता और राष्ट्रभाषा हिन्दी को लक्षित होने के कारण अत्यन्त प्रेरक-उद्बोधक है। सूचना खचित आपकी इस मासिक पत्रिका को बृहत्तर हिन्दी-सेवियों का स्नेह मिलता रहे और आपकी सारस्वत साधना यशस्विता के शिखर चूमे।

—प्रो० डॉ० राजेन्द्र पंजियार, भागलपुर, बिहार

'भारतीय वाङ्मय' के जून-जुलाई अंक में 'पुस्तक विलाप' यथार्थ का चित्रण है।

—दयानन्द वर्मा, नई दिल्ली

आप बधाई के पात्र हैं कि आपने 'भारतीय वाङ्मय' का उच्च स्तर कायम रखा है और अपने पिताजी के कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं।

जून-जुलाई 2009 के अंक में आपने 'डीम्ड विश्वविद्यालयों की भरमार' की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। इससे क्या शिक्षा का स्तर ऊँचा होगा?

श्री जार्ज कुट्टी वट्टोत्त ने बताया (साहित्य परिक्रमा, ग्वालियर, जुलाई-सितम्बर, 2009) कि केरल में महात्मा गाँधी विश्वविद्यालय की स्थापना 1943 में हुई थी और आज भी वहाँ हिन्दी विभाग नहीं है। शिलांग से डॉ० अकेला भाई ने बताया कि मेघालय के किसी भी प्रेस में हिन्दी में काम करने के लिए सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। उधर हिन्दी के 'थीसिस' का अंग्रेजी अनुवाद करना पड़ता है।

इस अंक में—इंटरनेट पर हिन्दी साहित्य, अमेरिकी गुफाओं में संस्कृत, सम्मान-पुरस्कार पठनीय हैं। **—अखिल विनय**, मुम्बई

'भारतीय वाङ्मय' का जुलाई 2009 का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका अपने इस कलेवर में अत्यन्त प्रभावशाली लगी। इसमें संकलित ज्ञानोपयोगी सूचनाएँ पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यह अपने आप में अनोखी पत्रिका है, जो साहित्यिक समाचार, विविध जानकारी, सम्मान और पुरस्कारों से पाठकों को रूबरू कराती है। साथ संलग्न पुस्तक सूची अत्यधिक लाभप्रद है।**—गायत्री सिंह**
रीडर एवं अध्यक्ष-हिन्दी विभाग, कानपुर

'भारतीय वाङ्मय' का अगस्त 2009, अंक 8 पाकर प्रसन्नता हुई। इस पत्रिका का अन्य पाठकों के लिए जो महत्त्व हो लेकिन मेरे लिए यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कारण यह कि बंगाल की खाड़ी में बसे मुझ जैसे व्यक्ति को यह पत्रिका साहित्यिक गतिविधियों एवं किताबी दुनियाँ से परिचित करवाती रहती है। साहित्य-संसार से जोड़े रखने के लिए यह सेतु का काम करती है। इसीलिए मैं इसकी प्रतीक्षा करता रहता हूँ। आपका सम्पादकीय, चिंतन को धारदार बनाने में भूमिका निभाता है। 'किताब' पर लिखी कविताएँ कुछ को छोड़कर शेष महत्त्वपूर्ण होती हैं। आलेख भी प्रभाव छोड़ते हैं। साहित्य और समाचार की यह पत्रिका अपने उद्देश्य में सफल है।

—डॉ० व्यास मणि त्रिपाठी, अण्डमान

'भारतीय वाङ्मय' का अगस्त 2009, अंक प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण साहित्य जगत की विविध गतिविधियों की सम्पूर्ण जानकारी देने वाली इस लघु पत्रिका को पाकर मन गदगद् हो जाता है। इस माह का 'भारतीय वाङ्मय' पुण्यश्लोक स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी का स्मरण करा दे रहा है जिसमें आपकी भावांजलि प्रकाशित है। उस पुण्यवान आत्मा के लिये हम सभी लोगों की स्नेहांजलि समर्पित है। इस परिप्रेक्ष्य में ध्यातव्य है, मोदी जी का 'भारतीय वाङ्मय' के जनवरी-फरवरी 2007 में लिखा हुआ वह संस्मरण—''कवि जी आओ घर चलें, रैन भई एहि देस।'' इस संस्मरण को प्रकाशित कर आपने अतीत के सारे सन्दर्भों को ताजा कर दिया है। आपके सम्पादकीय का तो कोई जोड़ नहीं है। आज के हताश और विपथगामी लोगों के लिये यह सम्पादकीय एक उत्साहवर्द्धक दीपशिखा के तुल्य है।

इस अंक में एस० शंकर का एक वक्तव्य 'साहित्य की कसौटी' भी गौर करने लायक है। आज हिन्दी की अनेक नामी संस्थाओं पर एक विशेष विचारधारा से जुड़े लोग अपना एकाधिकार स्थापित करना चाहते हैं। उन्हें किसी निरपेक्ष या स्वतन्त्र चिन्तन वाले लोकप्रिय व्यक्ति का इन अकादमिक पदों पर आगमन बिल्कुल नहीं सुहाता है।

मैं अपनी सम्पूर्ण भावनाओं के साथ इस पत्रिका की उत्तरोत्तर समृद्धि की कामना करता हूँ।

—डॉ० आद्याप्रसाद द्विवेदी, गोरखपुर

आपका अगस्त 2009 अंक मिला। धन्यवाद! आपकी भावांजलि को पढ़कर मैं भाव-विभोर हो उठा। सम्पादकीय अच्छा लगा। पत्रिका की विषय-वस्तु सराहनीय है। अंकों की निरन्तरता को देखकर खुशी होती है। **—डॉ० आत्म विश्वास,** भागलपुर

पुस्तक समीक्षा

सबद शिल्पी
डॉ० शुकदेव सिंह
प्रबन्ध सम्पादक
संत विवेकदास आचार्य
डॉ० रामदरश मिश्र
सम्पादन : **भगवन्ती सिंह**
प्रथम संस्करण : 2009 ई०
पृष्ठ : 500 + 32 (चित्र) = 532
सजि. : रु० 600.00 ISBN : 978-81-7124-714-1
प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

सोचकर दु:ख होता है कि मेरे परम आत्मीय डॉ० शुकदेव सिंह नहीं रहे। लेकिन मन कहता है कि कैसे मान लिया जाय कि वे नहीं रहे। हर क्षण तो लगता है कि वे यहीं कहीं हैं। वे मुझे पुकारेंगे या मैं उन्हें पुकारूँगा और एक आत्मीय संवाद होने लगेगा। लगता है हिन्दू विश्वविद्यालय जाऊँगा तो वहाँ के पूरे परिवेश में उन्हें व्याप्त पाऊँगा और विभाग से लेकर उनके घर तक हमारे साहचर्य की प्रीतिकर लय बनी रहेगी। न जानें कितनी बातें होंगी—कुछ अपनी, कुछ विभाग की, कुछ पूरे हिन्दी जगत की।

तो सच यही है कि शुकदेवजी जाकर भी गये नहीं हैं। वे अपनी विशिष्ट कृतियों में तो ज़िन्दा हैं ही, अनेक साहित्यकारों, शिक्षकों और शिष्यों के मनोजगत में अपनी विशिष्ट रुचि लेकर व्याप्त हैं। उनके साहित्यकार मित्र, पाठक और शिष्य देश से लेकर विदेश तक फैले हुए हैं। प्रस्तुत पुस्तक इस बात का ज्वलंत-प्रमाण है। इस पुस्तक के लेखों और लेखकों पर दृष्टिपात करने पर यह सहज ही प्रमाणित हो जाता है कि उनके चाहने वाले अनंत लोग थे और उनके साहित्यिक और शैक्षिक व्यक्तित्व के अनेक रंग थे। उनकी अपनी दुनिया बड़ी थी, उसमें साहित्यकार और शिक्षक तो थे ही गुरु और शिष्य भी थे, राजनेता धर्माचार्य और प्रकाशक भी थे, नाटक और फिल्म जगत की हस्तियाँ भी थी और यह सब यों ही नहीं था बल्कि शुकदेवजी की प्रतिभा के विविध आयामों के नाते था।

इस पुस्तक से गुजर कर यह सहज ही अनुभव किया जा सकता है कि इसमें संकलित निबन्ध शुकदेवजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विविध छवियों से बहुत आत्मीयता के साथ रूबरू हो रहे हैं। साथ ही मीरा कुमार गुरुपाद संभवरामजी तथा काशी नरेश के भावभीने संदेश भी हैं। 38 निबंधों में विभिन्न लेखकों ने अपने-अपने अनुभव और दृष्टि से शुकदेवजी की विविध विशेषताओं को रूपायित किया है। शुकदेवजी का व्यक्तित्व भी विलक्षण था और प्रतिभा भी। इन दिनों के अपने विशेष रंग थे। शुकदेवजी बहुत शालीन थे किन्तु साथ ही निर्भीक और खेलंदड़ भी। उनका खेलंदड़ व्यक्तित्व काशी और काशी से बाहर के भी परिवेश में कुछ हलचल मचाये रखता था। वे जो सत्य अनुभव करते थे उसे बेबाक ढंग से कहते थे। साहित्य-जगत् में एक गिरोह द्वारा प्रतिभा पहचान की जो धारा बहा दी गई है वे उसके विरुद्ध चलते थे और गिरोह के षड्यंत्रों की पहचान कर उसे ललकारते रहते थे। अत: गिरोह और उसके आसपास के लोग इनके शत्रु बन जाते थे और ज़हर उगलते रहते थे किन्तु शुकदेवजी हँसकर कहते थे—''कोई बात नहीं।'' लेकिन कुल मिलाकर शुकदेवजी के प्यार की दुनिया बड़ी थी। उसमें वे अनेक लोग शामिल थे जो प्यार को प्यार देते हैं, तो इन निबंधों में इन्हीं लोगों ने शुकदेवजी को बहुत शिद्दत से याद किया है, उनके व्यक्तित्व एवं रचनाओं के सौन्दर्य को रेखांकित किया है। इस दुनिया के लोगों में उनके वे शिष्य भी हैं जिन्हें उनकी प्रतिभा का प्रसाद मिला है, उनका तथा उनके परिवार का गहरा सक्रिय प्यार मिला है।

शुकदेवजी की प्रतिभा की व्याप्ति अनेक क्षेत्रों में थी। साहित्य, व्याकरण, भाषा विज्ञान आदि क्षेत्रों में उनकी सम्यक् गति थी। साहित्य में भी वे एक विधा या काल तक सीमित नहीं थे। वे कविता, कथा, नाटक, आलोचना सभी के अच्छे अध्येता और गहरे पारखी थे। आधुनिक साहित्य के साथ-साथ भक्ति साहित्य में भी वे धँसे हुए थे और कबीर साहित्य की उनकी यात्रा तो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसलिए इन संस्करणों में कई ऐसे हैं जो उनके साहित्य-विवेक की छवियाँ उद्घाटित करते हैं एवं संतकाव्य सम्बन्धी उनके अवदान को रेखांकित करते हैं। सुकदेवजी गहरे साहित्य विवेचक तो थे ही, उनमें सर्जनात्मक प्रतिभा का भी आलोक व्याप्त था जो मुख्यतया 'सब जग जलता देखिया' के संस्मरणों में दिखाई पड़ता है। शुकदेवजी की भाषा की भी अपनी राह थी—विशिष्ट राह जो इन संस्मरणों में और भी विशिष्ट हो उठी है। राजेन्द्र कृष्ण का निबंध इसी पुस्तक की यात्रा करता है।

पुस्तक के धरोहर खंड में शुकदेवजी से लिये गये कुछ साक्षात्कार हैं, कुछ चिट्ठियाँ हैं, कुछ प्रशस्ति पत्र हैं। साक्षात्कारों में एक रामचरित मानस से और एक युवालेखन से सम्बद्ध हैं। यानी कि ये साक्षात्कार भी इनकी पूरी व्याप्ति की पहचान कराते हैं। पुस्तक के तृतीय अध्याय में गोरखनाथ, रामानन्द, कबीर और रविदास से सम्बन्धित शुकदेवजी के लेख हैं। ये निबंध थोड़े में ही शुकदेवजी के भक्तिकाल सम्बन्धी अध्ययन और अवदान के वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हैं। यह भी अच्छा लगा कि शुकदेवजी के जीवन काल के उनसे सम्बन्धित जो कार्यक्रम हुए उनके छायाचित्र पुस्तक में सम्मिलित कर लिये गये हैं।

और अन्त में मैं श्रीमती भगवंती सिंह को हार्दिक बधाई देरहा हूँ जिनकी अपूर्व निष्ठा और अथक परिश्रम से यह पुस्तक सम्भव हो सकी। भगवंतीजी पति की सच्ची सहचरी रही हैं। सहयात्रा में आपसी प्यार और तकरार की कितनी ही तिथियाँ दोनों के भीतर अंकित होती चली गयी होंगी। दोनों ने प्यार से दोनों को भरपूर जिया होगा। आज भगवंतीजी अकेली पड़ गयीं—तमाम यादों का स्पंदन और दर्द का स्वर लेकर। किन्तु भगवंतीजी ने इस अकेलेपन के बीच अपने को निष्क्रिय होने नहीं दिया। उन्होंने अपने पति के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रकाश को लोगों के भीतर सतत उजागर रखने का संकल्प लिया। उसी संकल्प का क्रियान्वित रूप है यह पुस्तक। लेकिन यह एक समर्पित पत्नी का व्यक्तिगत उद्देश्य से पति के प्रति किया गया महत्त्वपूर्ण कार्य है ? नहीं यह साहित्य के पाठकों के मन में एक विशिष्ट साहित्यिक व्यक्तित्व की छवियों को उजागर किये रहने का सामाजिक कार्य है। तो हम लोग श्रीमती भगवंती सिंह के ऋणी हैं कि उन्होंने व्यक्तिगत प्रपत्रों से वह बड़ा सांस्कृतिक कार्य किया जिसे हम लोगों को करना चाहिए था।

—रामदरश मिश्र

भोजपुरी और हिन्दी
(भोजपुरी व्याकरण की पहली पुस्तक)
डॉ० शुकदेव सिंह
प्रथम संस्करण : 2009 ई०
पृष्ठ : 292
सजि. : रु० 275.00 ISBN : 978-81-7124-671-7
अजि. : रु० 175.00 ISBN : 978-81-7124-672-4
प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

कबीर-साहित्य के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान, प्रख्यात भाषाविद् तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के अवकाश प्राप्त हिन्दी प्रोफेसर स्वर्गीय डॉ० शुकदेव सिंह की एक महत्त्वपूर्ण कृति है—'भोजपुरी और हिन्दी'। पश्चिमी मागधी भाषा वर्ग की वर्तमान जनभाषाओं के समग्र भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से यह एक ऐतिहासिक कार्य है। यह प्रकाशन मेरी दृष्टि में विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी तथा डॉ० शुकदेव सिंह की विदुषी पत्नी भगवन्ती सिंह की ओर से उनकी स्मृति को अक्षर-तर्पण है।

भोजपुरी डॉ० सिंह की मातृभाषा है तथा

हिन्दी उनकी कार्य भाषा। वे हिन्दी के विद्वान प्राध्यापक थे। उनकी शोध-दृष्टि अत्यन्त सूक्ष्म तथा लोकाभिमुख थी। उन्होंने शोध के लिए उन क्षेत्रों तथा विषयों पर विशेष ध्यान दिया था जो लोक जीवन से जुड़े थे अथवा उपेक्षित थे। इसीलिए उनकी शोध-प्रणाली में क्षेत्र-सर्वेक्षण पद्धति द्वारा सामग्री-संकलन तथा विश्लेषण की प्रवृत्ति मिलती है। 'भोजपुरी और हिन्दी' इसी पद्धति पर लिखित पुस्तक है। इसे भोजपुरी व्याकरण की पहली पुस्तक कहा गया है लेकिन यह वास्तव में भोजपुरी और हिन्दी भाषा के व्याकरणपरक भाषावैज्ञानिक अध्ययन की पहली पुस्तक है जिसकी पद्धति तुलनात्मक है। इस पुस्तक में दोनों भाषाओं की ध्वनि, रूप-रचना तथा व्याकरणिक रूपों का अध्ययन है।

इसकी विषय-सामग्री का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि इसकी सामग्री का आयाम बड़ा है, जबकि नाम छोटा। पुस्तक की सामग्री को तीन वर्गों में बाँटकर समझा जा सकता है। प्रथम वर्ग में भोजपुरी भाषा के ऐतिहासिक अस्तित्व, सीमा रेखा, क्षेत्रफल, जनसंख्या आदि का सामान्य विवेचन और ध्वनि, रूप-रचना तथा व्याकरणिक रूपों यथा संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि का हिन्दी के साथ तुलनात्मक अध्ययन है। डॉ० सिंह ने भोजपुरी भाषा का सूक्ष्म तथा वैज्ञानिक अध्ययन करते हुए इसकी भाषिक पहचान को रेखांकित किया है। इस वर्ग में दस उपखण्ड हैं। प्रथम खण्ड प्रास्ताविक में भोजपुरी का सामान्य परिचय है। शेष नौ खण्डों में क्रमश: ध्वनि, रूप-रचना, संज्ञा, कारक, विशेषण, संख्यावाचक विशेषण सर्वनाम, क्रिया तथा अव्यय रूपों का तुलनात्मक अध्ययन है।

दूसरा खण्ड बिहार में भोजपुरी के अतिरिक्त बोली जाने वाली आर्य भाषाओं—मैथिली, मगही, वज्जिका तथा अंगिका के साथ-साथ नेपाली भाषा का हिन्दी के साथ तुलनात्मक अध्ययन है। यहाँ भी अध्ययन पद्धति वही है जो भोजपुरी के अध्ययन की है। प्रत्येक भाषा के ऐतिहासिक सन्दर्भ, सीमा रेखा, क्षेत्रफल आदि का प्रामाणिक परिचय देते हुए क्रमश: उनकी ध्वनि, रूप-रचना तथा व्याकरणिक रूपों यथा संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया आदि का विवेचन किया गया है।

तीसरा खण्ड 'भोजपुरी जिन्दगी' है। इस खण्ड में भोजपुरी क्षेत्र की लोकोक्तियों, मुहावरों, गाँव में खेती-बारी, पौनी-पजहर के रहनी-सहनी के शब्दों, बनारस के घाटों की बोली के अतिरिक्त व्रत-त्योहारों की कहानियाँ तथा लोक कवि बिसराम के बिरहा का संकलन-विवेचन है। यह संकलन विवेचन इस खण्ड के लिए दिए गये नाम 'भोजपुरी जिन्दगी' को सार्थकता प्रदान करता है। इस सामग्री को प्रथम खण्ड के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के साथ मिलाकर देखें तो दोनों में अंगी-अंग अथवा पूर्य-पूरक सम्बन्ध अनुभव होता है। दोनों मिलकर भोजपुरी लोकजीवन और भाषा का एक समग्र चित्र प्रस्तुत करते हैं। यह भोजपुरी लोक जीवन के प्रति डॉक्टर साहब के हार्दिक लगाव का प्रमाण है। इस लगाव के केन्द्र में उनका ग्रामीण जीवन से सम्बद्ध होना है।

यह ग्रन्थ पहली बार 1967 ई० में मुजफ्फरपुर से प्रकाशित हुआ था। उस संस्करण में भोजपुरी और हिन्दी का तुलनात्मक अध्ययन और बिहार की शेष चार भाषाओं तथा नेपाली से सम्बन्धित सामग्री है। भोजपुरी जिन्दगी के अन्तर्गत संकलित सामग्री बाद की है जिसे वर्तमान संस्करण में स्थान मिला है। इस ग्रन्थ के विवेचन के प्रसंग में एक बात का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूँ कि यह ग्रन्थ तब लिखित और प्रकाशित हुआ था जब डॉक्टर साहब बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर के हिन्दी विभाग में हम लोगों के सहयोगी थे। सन् 1964 के आस-पास हम दोनों को एम०ए० कक्षा में भाषा विज्ञान के अध्यापन का दायित्व सौंपा गया। डॉक्टर साहब को भोजपुरी भाषा का अध्यापन और मुझे सामान्य भाषा विज्ञान का अध्यापन करने को कहा गया। अध्यापन हेतु डॉक्टर साहब ने जो सामग्री संकलित की उसी से इस पुस्तक की रचना हुई। छात्रों की आवश्यकता को देखते हुए इसमें मगही, मैथिली आदि सभी बिहारी आर्य भाषाओं के साथ-साथ पड़ोसी देश नेपाल की भाषा नेपाली को भी स्थान दिया गया। उक्त पुस्तक में मुख्य भाग भोजपुरी और हिन्दी का है तथा परिशिष्ट के अन्तर्गत मगही, मैथिली, वज्जिका, अंगिका तथा नेपाली को रखा गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह भोजपुरी और हिन्दी के व्याकरणिक रूपों का तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करने वाला प्रथम ग्रन्थ है। लेकिन यह भी सच है कि शेष पाँच भाषाओं का एक अध्ययन करने के कारण यह ग्रियर्सन द्वारा कथित बिहारी वर्ग की सभी आर्य भाषाओं का भाषापरक तुलनात्मक अध्ययन करने वाला प्रथम ग्रन्थ भी है। अत: सही अर्थ में यह एक ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य है।

ग्रियर्सन ने बिहारी में बोली जाने वाली आर्य भाषाओं के लिए बिहारी वर्ग नाम दिया था तथा इसके अन्तर्गत मात्र तीन भाषाओं की चर्चा की थी—भोजपुरी, मगही और मैथिली। ग्रियर्सन द्वारा प्रदत्त यह नाम भ्रामक है। क्योंकि, इन भाषाओं में से भोजपुरी, मैथिली और वज्जिका भाषाएँ बिहार से बाहर भी बोली जाती है। भोजपुरी भाषा का एक बड़ा क्षेत्र उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में गोरखपुर से लेकर बनारस तक फैला है। इसी तरह वज्जिका और मैथिली अपनी उत्तरी सीमा पर नेपाल तराई के एक बड़े भू-भाग में बोली जाती है। इतना ही नहीं, जब बिहार के अन्तर्गत झारखंड का क्षेत्र था तब भी और आज भी संताली आदि आष्ट्रिक परिवार की भाषाओं का अस्तित्व बिहार में है जो बिहारी वर्ग के अन्तर्गत परिवारगत भिन्नता के कारण समाहित नहीं है।

विदेशी होने के कारण ग्रियर्सन भाषागत नमूनों के लिए अपने अधीनस्थ कर्मचारियों पर आश्रित था। इसलिए वह दो भाषाओं की पहचान करने में असमर्थ रहा उसने जिस छिकाछिकी को मैथिली का एक उपभेद समझा वह आज अंगिका के रूप में स्वतंत्र अस्तित्व लेकर खड़ी है। इसी तरह उसने जिसे पूर्वी भोजपुरी और पश्चिमी मैथिली कहा वह प्राचीन वैशाली गणतंत्र की आधुनिक जनभाषा वज्जिका के रूप में अपनी पहचान बना चुकी है। डॉ० शुकदेव सिंह ने किताब पढ़कर किताब लिखने की धारणा को नकार कर क्षेत्रगत अध्ययन की वास्तविक पद्धति अपनाते हुए न केवल इन दोनों भाषाओं के अस्तित्व का पुरजोर समर्थन अपनी पुस्तक में किया है अपितु इनका प्रामाणिक विवेचन भी किया है।

इसका एक स्पष्ट कारण है। इस पुस्तक को लिखते समय डॉक्टर साहब मुजफ्फरपुर में प्राध्यापक थे। मुजफ्फरपुर एक ऐसा स्थल है जो बिहारी कार्य भाषाओं की केन्द्रीय धुरी है। मुजफ्फरपुर वज्जिका भाषा का मध्य क्षेत्र है। यहाँ से सटे पश्चिम नारायणी नदी पार करते ही भोजपुरी का क्षेत्र प्रारम्भ हो जाता है। दक्षिण में गंगा पार करते ही पटना में मगही भाषा क्षेत्र आ जाता है। उत्तर में जहाँ वज्जिका का क्षेत्र समाप्त होता है वहीं से नेपाली का क्षेत्र प्रारम्भ होता है। पूरब में पचास किलोमीटर जाते ही मैथिली मिल जाती है। थोड़ा और आगे बढ़ने पर अंगिका का क्षेत्र आ जाता है। यदि निवासियों की बातें करें तो यहाँ उपर्युक्त सभी भाषाओं के बोलने वाले कम या अधिक संख्या में इस शहर में बसे हुए हैं। अत: इनमें से किसी भाषा से सम्बन्धित पूर्व प्रकाशित सामग्री, ध्वनियों की उच्चारण प्रकृति (स्पीच हैबिट), भाषा के वास्तविक नमूने तथा अन्य अपेक्षित सामग्री किसी भी भाषाविद् को आसानी से सुलभ हो जाती है। डॉक्टर साहब ने इस सुलभता का भरपूर लाभ उठाया। यहाँ रहकर काम करने के कारण ही उन्होंने मैथिल मानसिकता तथा वज्जिका एवं अंगिका भाषा-भाषियों की आन्दोलनी प्रवृत्ति को अनुभव किया, जो उनकी टिप्पणियों में अनायास उभर कर आता है। जैसे—''अंगिका अंग देश की बोली का गढ़ा हुआ नाम है जो बोलियों के आन्दोलन के क्रम में ऐतिहासिक शक्ति प्राप्त कर चुका है।''

दुर्भाग्य है कि वज्जिका की राजधानी में बज्जिका को वह महत्त्व भी प्राप्त नहीं हो सका है जो इसके एक अंचल की बोली मैथिली को मिल गया है। आवश्यकता है कि इस बोली की शक्ति को पहचाना जाय और मैथिली के निगलने वाले प्रयास से इसे बचाकर इसकी स्वतंत्र प्रतिष्ठा का

अवसर प्रदान किया जाय। ''मैथिली क्षेत्र के पण्डितों ने मैथिली भाषा की नींव डाली है।....यदि बहुत स्पष्ट रूप से कहा जाय तो यह मिथिला क्षेत्र के पण्डितों की निष्ठा, प्रचार और उद्योग बुद्धि का परिणाम है।'' इत्यादि।

इस ग्रन्थ के दूसरे प्रकरण में कुछ बोलियाँ शीर्षक के अन्तर्गत मैथिली वज्जिका, मगही, अंगिका और नेपाली का भोजपुरी की ही भाँति व्याकरणिक रूपों की दृष्टि से तुलनात्मक विवेचन है। समय के प्रवाह के साथ मैथिली और नेपाली की सत्ता भाषा की हो चुकी है। मगही तथा अंगिका भाषा के रूप में मान्य हो चुकी है तथा वज्जिका भाषा के रूप में अपने को प्रतिष्ठित करने के करीब पहुँच रही है। इस प्रकार भोजपुरी की बोली मैथिली (अब भाषा) मिथिला क्षेत्र में, मगही (मागधी) मगध क्षेत्र में, वज्जिका प्राचीन काल में विख्यात वृज्जि संघ के क्षेत्र में और अंगिका अंग देश (अब भागलपुर) और इसके आस-पास के क्षेत्र में बोली जाती है। यह अंश पुराने संस्करण में परिशिष्ट के रूप में है जो यह सूचित करता है कि भोजपुरी और हिन्दी के अतिरिक्त अलग से उक्त भाषाओं का अध्ययन भी किया गया है। ऐसे विवरण के सही तथ्य को जानने के लिए 'डॉक्टर साहब' की तरह भाषाविद् और भाषा वैज्ञानिक होना पड़ेगा।

इस ग्रन्थ के तीसरे खण्ड में भोजपुरी क्षेत्र में प्रचलित लोकोक्तियों, मुहावरों तथा जन-जीवन के विविध व्यापारों से सम्बन्धित सामग्री का समावेश अकारण नहीं है। इसका उद्देश्य है भोजपुरी भाषी क्षेत्र की युवा पीढ़ी तथा विदेशीपन की मानसिकता से ग्रस्त लोगों के मन में अपनी भाषा, संस्कृति तथा लोक चेतना के प्रति अनुराग जगाना तथा भाषिक स्वाभिमान पैदा करना। पढ़े-लिखे तथा आधुनिकता की अंधी दौड़ में उन्मत्त की तरह भागे जा रहे लोगों की उपेक्षा के कारण लोकजीवन से उद्भूत शब्द मरते जा रहे हैं, मुहावरे और लोकोक्तियाँ मिटने के कगार पर हैं। इस मरण-यात्रा को अन्तिम विराम तक पहुँचने से रोकने के लिए डॉ० सिंह ने अपनी रचनात्मक ऊर्जा का उपयोग किया है। प्रकारान्तर से यह संस्कृति की रक्षा का प्रयत्न है और अन्य जनभाषा-भाषियों के लिए प्रेरक सन्देश भी। हम अपने लोक जीवन से कटकर, भाषिक चेतना से बाँझ होकर अन्ततः अंग्रेजी और अंग्रेजियत को ढोने वाले कुली भर रह जायेंगे।

निष्कर्षतः गुणवत्ता की दृष्टि से यह एक प्रामाणिक ग्रन्थ है और भाषा विज्ञान के छात्रों, अध्यापकों तथा भाषाविदों के लिए समान रूप से उपयोगी है।

—अवधेश्वर अरुण

अवकाश प्राप्त प्रोफेसर तथा हिन्दी विभागाध्यक्ष
बी०आर०ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

हिन्दी भाषा, व्याकरण और रचना

डॉ० अर्जुन तिवारी

द्वितीय संस्करण : 2010 ई०

पृष्ठ : 484

अजि. : रु० 160.00 ISBN : 978-81-7124-707-3

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

सन् 1888 ई० में यूरोप के विद्वान् प्रशासक फेडरिक पिसाट ने अपनी सरकार पर दबाव डाला कि वही अंग्रेज भारत में शासन करने जायँ जो हिन्दी परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हों। आज परिस्थिति उलट गयी है। अब वही भारतीय प्रशासक होगा जो अंग्रेजी में हाई-फाई हो, आङ्ग्ल संस्कृति और सभ्यता का अंधानुयायी हो। हमारी नयी पीढ़ी अभी यह नहीं समझ पायी है कि विश्व की समस्त भाषाओं में अपनी हिन्दी ही सर्वाधिक सरल, सहज है। इसके बिना 'हिय का सूल' नहीं मिट सकता। देखा जाता है कि विदेशी भाषा के व्याकरण के पीछे छात्र तन-मन-धन-समय लगा बैठते हैं किन्तु अपने हिन्दी व्याकरण की उपेक्षा करते हैं। फलतः वे अभिव्यक्ति-कौशल में पिछड़ जाते हैं, प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं में सफल नहीं हो पाते। हिन्दी के परिशुद्ध ज्ञान द्वारा नवयुवक हिन्दी भाषा और साहित्य के सम्बल पर जीवन में सफलता की सीढ़ी पर धड़धड़ाते कैसे चढ़ें, किस्मत को मुट्ठी में कैसे बाँधें—इसी सदिच्छा एवं सत्प्रयोजन की पूर्ति हेतु ग्रन्थ की रचना हुई जिसका प्रथम संस्करण हाथों-हाथ बिक गया जो इसकी उपादेयता का प्रमाण है।

प्रस्तुत ग्रन्थ हिन्दी-भाषा, हिन्दी-व्याकरण तथा हिन्दी-रचना का समग्र है जिसका अध्येता हिन्दी-भाषा और रचना की बारीकियों से सुपरिचित होगा। भाषा एवं हिन्दी-भाषा, व्याकरण एवं रचना—इन तीनों खण्डों में विभक्त इस ग्रन्थ में भाषा, विश्व-भाषा, व्याकरण, रस-छन्द-अलंकार तथा रचना के विविध पक्षों का सांगोपांग विश्लेषण प्रस्तुत है।

प्रथम खण्ड 'भाषा एवं हिन्दी भाषा' के अन्तर्गत भाषा की परिभाषा, उसके तत्त्व, लक्षण, भेद पर प्रकाश डाला गया है। मानव-जीवन में भाव-सम्प्रेषण, उद्बोधन, रसास्वादन, दर्शन-चिन्तन का मूलाधार भाषा है। भाषारूपी ज्योति के अभाव में चर-अचर सभी अन्धकार में डूब जाते हैं, किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। विश्व-भाषाओं के वर्गीकरण, भारोपीय भाषा, भारतीय आर्यभाषा तथा हिन्दी-भाषा की महत्ता का आकलन इसी खण्ड में किया गया है। भाषा विज्ञान की अपरिहार्यता, हिन्दी बोलियों के विश्लेषण के साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ते हिन्दी के प्रभाव का अध्ययन भी इसी खण्ड में हुआ है।

द्वितीय खण्ड 'व्याकरण' से सन्दर्भित है। भाषा की चञ्चलता, स्वच्छन्दता तथा अराजकता को मिटाने तथा उसे अनुशासित करने के लिए व्याकरण आवश्यक है। व्याकरण के स्वरूप, उसकी उपयोगिता के साथ ही इस खण्ड में वर्ण, वर्तनी, लिपि, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय, वाक्य-रचना को सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। लिंग, वचन, कारक की विशद विवेचना द्वारा हिन्दी में हो रही त्रुटियों से पाठक वर्ग को सावधान रहने की अपील की गई है।

तृतीय खण्ड 'रचना' है जिसमें शब्द-विवेक, शब्द-रचना, संक्षेपण, पल्लवन, पत्र-लेखन, प्रतिवेदन-लेखन, टिप्पणी-लेखन, ज्ञापन, अनुस्मारक एवं संवाद-लेखन के स्वरूप को उदाहरणों के साथ उपस्थापित किया गया है। साहित्य की विभिन्न विधाएँ—कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, निबंध, आलोचना, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, रिपोर्ताज, रेखाचित्र, भेंटवार्ता, डायरी, पत्र-साहित्य, साक्षात्कार, स्तम्भ-लेखन, मौलिक संचार आदि की सारगर्भित सोदाहरण प्रस्तुति है जिसके आधार पर रचना कर युवा पीढ़ी सुप्रसिद्ध साहित्यसेवी बन सकती है।

राष्ट्रवाणी के व्याकरण और रचना से सन्दर्भित इस उपयोगी कृति से लाभान्वित होकर प्रतिभासम्पन्न छात्र, कर्त्तव्यनिष्ठ शिक्षक तथा यशस्वी रचनाकार उपकृत होंगे, यह असंदिग्ध है।

हाशिए पर भविष्य

(काव्य-संग्रह)

डॉ० ऋतु वार्ष्णेय

प्रथम संस्करण : 2009 ई०

पृष्ठ : 64

सजि. : रु० 70.00 ISBN : 978-81-7124-696-0

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

ऋतु वार्ष्णेय का यह पहला काव्य-संग्रह है। इस संग्रह की कविताओं को पढ़ते हुए जो पहली धारणा बनती है वह यह कि, ऋतु कविता लिखती नहीं हैं; कविता को जीवन में उतारती हैं; उसे जीती हैं। अगर कहा जाये कि कविता जो जीवन में किया जाना (शायद जिया जाना भी) सम्भव नहीं हो पाता उसे कविता में जीने और रचने की कोशिश इस संग्रह की कविताओं में दिखाई देती है। इस तरह इन कविताओं के माध्यम से एक दूसरा जीवन सम्भव होता है। सम्भवतः एक कवि के लिए यह दूसरा जीवन कहीं अत्यधिक

वास्तविक और रचनात्मक होता है। एक स्त्री के लिए तो और भी अधिक। महादेवी वर्मा की कविताओं को इस परिप्रेक्ष्य से देखने पर उन पर लगाए गए पीड़ावादी, पलायनवादी और रहस्यवादी आरोप निराधार हो जाते हैं।

इनकी कविताएँ ऐसा यथार्थ रचती हैं जिसमें स्त्री-जीवन की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष न जानें कितनी छवियाँ, कितने बिम्ब बनते हैं। 'स्त्री' पर इस संग्रह में अधिसंख्य कविताएँ हैं। 'स्त्री-द्वै' और 'स्त्री-द्वैद्व' शीर्षक दो कविताओं में डा० ऋतु ने 'स्त्री' के जो दो अलग-अलग इमेज बनाईं हैं उसी से उनकी अनुभव-सम्वेदना की व्यापक परिधि का पता चलता है। पहली कविता में वह कामकाजी स्त्री चित्रित है जो साबुन की टिकिया की तरह घुलती है; चलती है; जिन्दगी की गर्द—; को साफ करती है। दूसरी कविता में स्वप्न और यथार्थ के चक्र में फँसी एक ऐसी स्त्री-छवि का चित्रण है जो खुला आसमान पाने, अपने अस्तित्व को सिद्ध करने, अपने जिंदा होने का एहसास पैदा करने का संघर्ष कर रही है।

इस संग्रह की शीर्षक कविता 'हाशिए पर भविष्य' में गरीबी और अभाव में रोज-ब-रोज की जीवन-यंत्रणा को सहते हुए एक ऐसी निम्नवर्गीय स्त्री की छवि सामने आती है जिसके मन के गहरे अतल में पीड़ा, अभाव और निराशा का ऐसा संसार बसा है जो आँखों की गहरी मौन भाषा में सप्रश्न प्रत्यक्ष होता है।

सप्रश्नता इस संग्रह की मूल संरचना में है। कहीं मौन तो कहीं मुखर। मौन की अवस्था में स्वयं कवयित्री इन प्रश्नों से रु-ब-रु है। द्वन्द्व, अन्तर्द्वन्द्व, मन की बेचैनी इन कविताओं का भाषिक स्वभाव है। जब संयम डिग जाता है तो यही मौन मुखर हो उठता है। हालाँकि मुखरता इन कविताओं का मुख्यार्थ नहीं है। छोटी-छोटी सूचनाओं, समाचारों, घटनाओं से कवि-हृदय व्यथित और बेचैन हो उठता है। यह व्यथा, यह बेचैनी जब तक शब्दान्तरित नहीं हो जाती कवि को अपना 'होना' निरर्थक लगने लगता है। बिना किसी चातुरी के कवि-कर्म की यह सार्थक सहजता ऋतु के समकालीन नई-पीढ़ी के कवियों के यहाँ कमतर है।

सुश्री ऋतु वार्ष्णेय की कविताओं में भावात्मक-परिपक्वता भले ही न मिले पर एक सहज संवेदनात्मक टटकापन, निश्छल निष्कपट साहचर्य इन कविताओं का गुण-धर्म है जिससे इनके प्रति एक रचनात्मक विश्वास पैदा होता है। नई सभ्यता और संस्कृति के पनपते कई सारे लक्षणों को ऋतु ने अपनी कविताओं का कथ्य बनाया है। बाजार, रोशनी, चकाचौंध में अब हर वस्तु विज्ञापन का वस्तु होकर रह गई है। सच और झूठ के बीच का अन्तर खत्म हो गया है। चमकदार रोशनी ने हकीकत का रंग बदल दिया, ऐसे में—

''स्याह सफेद बिना सजावट की सत्यता/किसी को आकृष्ट नहीं कर पाती/असत्य की कीमत लाखों में/और सत्यता टका सेर रह जाती है।''

परन्तु, अब भी इनको इस चकाचौंध रोशनी से परे एक ऐसी रोशनी पर भरोसा है जिससे पड़ोसी का आँगन तो गुलजार होता ही है किसी भटके को रास्ता भी मिल जाता है—''मैं अपने घर के बाहर लगे/बल्ब को जलाना नहीं भूलती/क्योंकि—/वो रोशनी मेरे पड़ोसी का आँगन/तो गुलजार करती ही है/पर साथ ही किसी भटके को/रास्ता भी दिखा देती है।''

ऋतु के लिए सही मायनों में कविता संवेदनहीनता के विरुद्ध एक संवेदनशील मन की गुहार है, अत्यन्त ही भावुक, सरल, निर्मल और संकोची। बड़बोलेपन के विरुद्ध सकुचता यह सहज आत्म-विश्वास इनका कवि स्वभाव है। कविता ऋतु के अन्तर्मन में चलने वाली एक ऐसी भावात्मक बेचैनी है जिसमें हर उस चीज को बचा लेने की छटपटाहट दिखती है जो किसी के काम आ सके। ऋतु वार्ष्णेय जैसी नई पीढ़ी की कवयित्रियों में स्त्री-पीड़ा की परिधि यदि मानव-कल्याण के इस व्यापक संवेदन को छूने की कोशिश करती दिखती है तो इसे एक सार्थक सम्भावना के रूप में पहचाने जाने की जरूरत है।

—डॉ० विनोद तिवारी

हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

आगामी प्रकाशन

परलोक तत्व

लेखक

भार्गव शिवरामकिंकर योगत्रयानन्द

(पूर्वनाम : शशिभूषण सान्याल)

अनुवादक

एस०एन० खण्डेलवाल

इस पुस्तक के सम्बन्ध में महामहोपाध्याय डॉ० गोपीनाथ कविराज का अभिमत 'बंगवासी' पत्रिका में श्रावणमास शनिवार 1334 बंगाब्द (ईस्वी सन् 1933) में छपा था, उसे उद्धृत किया जा रहा है।

जो बंग साहित्य के इतिहास से परिचित हैं उन्होंने 'आर्यशास्त्र प्रदीप' का नाम अवश्य सुना होगा। भारतवर्ष के लिए नितान्त दुर्भाग्य का विषय है कि ऐसा प्रदीप प्रज्ज्वलित होकर इस देश में स्थायित्व लाभ नहीं कर सका। वह दीप प्रतिकूल वायु की ताड़ना से निर्वाण प्राप्त कर गया। यदि देश में वास्तविक ज्ञान पिपासा रहती, तब ऐसा अमूल्य ग्रन्थ रत्नाखण्ड की तरह यत्न तथा आदर के साथ यहाँ के प्रत्येक घर में स्थान लाभ करता। जिज्ञासु के निकट ही ज्ञान की महिमा प्रकाशित होती है। जिनको ज्ञानलिप्सा नहीं है वे स्वभावत: ज्ञान तथा ज्ञानप्रद साधन का समादर नहीं कर सकते। आर्यशास्त्र प्रदीप के उपरान्त महान् विद्वान लेखक ने मानवतत्व, भूत तथा शक्ति, आयुष्तत्व प्रभृति कई अपूर्व ग्रन्थ प्रकाशित किये। श्री भगवान की प्रेरणा से जगत के दु:ख से व्यथित होकर उन्होंने लेखनी ने धारणपूर्वक 'परलोक तत्व' का प्रणयन किया था। दु:ख का विषय है कि उनके एक भी ग्रन्थ आज सहजलभ्य नहीं हैं। जो वस्तुत: ज्ञानलिप्सु, मुमुक्षु हैं, जो शास्त्र विश्वासी हैं तथा ऋषिवाक्य में श्रद्धावान् है, वे इस ग्रन्थ से अत्यन्त प्रीतिलाभ करेंगे। विशेषत: इस ग्रन्थ में निगूढ़ आध्यात्म तत्व की समालोचना है। शास्त्र वाक्य के आपात प्रतीयमान विरोध का सामंजस्य है, साधना का भी रहस्य वर्णित है। एक प्रकार से इसमें संसार पीड़ित विक्षिप्त मति जीवों के स्थिर कल्याण लाभ का उपाय विवृत है। ऐसे वक्ता दुर्लभ हैं। पूज्यपाद ग्रन्थकार के समान प्राच्य तथा पाश्चात्य विद्या में समभावेन निष्णात, बहुश्रुत तथा भूयोद्दि एवं अनुभूति युक्त महापुरुष के ज्ञान तथा धर्मतत्व विषयक साक्षात् उपदेश अति दुर्लभ है।

इसीलिये उनकी लेखनी प्रसूत ग्रन्थ परलोक तत्व के तीन खण्ड को प्राप्त करके आनन्द लाभ कर रहा है। यद्यपि यह ग्रन्थ पूर्ण नहीं है, बहुत खोज के पश्चात् भी इसके चतुर्थ खण्ड का संधान नहीं मिला किन्तु इन तीन खण्डों में ही गागर में सागर की उक्ति चरितार्थ प्रतीत हो रही है। आशा करता हूँ कि वर्तमान हिन्दू समाज इस ग्रन्थ से प्रभूत उपकृत होगा। **—गोपीनाथ कविराज**

भारतीय संगीत का इतिहास

लेखक

स्व० डॉ० ठाकुर जयदेव सिंह

सम्पादिका : **प्रेमलता शर्मा**

प्रस्तुत ग्रन्थ 'भारतीय संगीत का इतिहास' अपने आप में असाधारण शोध-ग्रन्थ है। इसके लेखक डॉ० ठाकुर जयदेव सिंह बहु-आयामी व्यक्तित्व के विद्वान् थे। संगीतशास्त्र की सुविख्यात विदुषी प्रो० प्रेमलता शर्मा द्वारा सम्पादित इस ग्रन्थ को कोलकाता की 'संगीत रिसर्च एकेडमी' ने सन् 1994 ई० में संगीत-परिदर्शिनी ग्रन्थमाला के प्रथम पुष्प के रूप में प्रकाशित किया था। भारतीय संगीत क्षेत्र का अपने ढंग का यह पहला अनूठा ग्रन्थ है। अब इसका प्रकाशन विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी ने किया है। काशी संगीत का गढ़ माना जाता है। प्रस्तुत ग्रन्थ के विद्वान् लेखक

डॉ० ठाकुर जयदेव सिंह ने अपने उत्तम जीवन का उत्तरार्ध काशी में ही व्यतीत किया था। आप यहाँ के विद्वानों के प्रेरणा-स्रोत थे। यह ग्रन्थ उनकी अविस्मरणीय पुण्यस्मृति बनी रहेगी।

किसी भी संगीत का इतिहास अन्य कलाओं या विद्याओं के इतिहास की अपेक्षा कहीं अधिक अगम्य होता है। इसका कारण यही है कि संगीत अपने कोई भी प्रत्यक्ष अवशेष काल के वक्ष पर नहीं छोड़ जाता। संगीत का वर्णन, उसके लक्षण का विचार-विमर्श या उसके प्रयोग के सन्दर्भ—ये सब उपलब्ध हो सकते हैं, किन्तु स्वयं संगीत का श्रव्य रूप तो क्षणजीवी ही होता है। उसे पुन: प्रस्तुत (reproduce) करने के लिए सुरक्षित रखने के यान्त्रिक उपकरण आज से प्राय: सौ वर्ष से कुछ अधिक पूर्व ही उपलब्ध होने लगे हैं। मूर्त्तिकला, चित्रकला, स्थापत्य, साहित्य आदि की स्थिति ऐसी नहीं है, क्योंकि इनका प्रत्यक्ष रूप सुरक्षित रहता है। नृत्य को भी चित्र और मूर्त्ति के माध्यम से आंशिक रूप से अंकित किया जा सकता है। किन्तु गेय का अंकन उस कोटि का नहीं होता क्योंकि वह श्रव्य का प्रत्यक्ष रूप सुरक्षित नहीं रख सकता।

भारतीय संगीत में इतिहास के अध्ययन की स्थिति और भी बीहड़ है, क्योंकि उसका बहुत कम अंश स्वरलिपि में अंकित है और उसमें अनेकानेक धाराओं का मिश्रण दीर्घकाल से होता रहा है। इसलिए चाहे-अनचाहे ऐतिहासिक अध्ययन का मुख्य आधार 'लक्षण'-ग्रन्थ ही बन जाते हैं। भूतकाल के 'लक्ष्य' से सीधा सम्पर्क असम्भव ही होता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में वैदिक संगीत का वर्णन 128 पृष्ठों में हुआ है, जो कि पूरे ग्रन्थ का एक तृतीयांश है। यह वर्णन अनेक लक्षणगत प्रमाणों के साथ-साथ आज प्रचलित वैदिक पाठ-पद्धति और गान-पद्धति को लेते हुए प्रस्तुत किया गया है। वैदिक धारा में पाठ और गान का स्वरूप बहुत-कुछ अक्षुण्ण रह पाया है, इसलिये उस प्रसंग में लक्षण और लक्ष्य को साथ-साथ ले कर चलना सम्भव है। लेखक ने इस सुविधा का भरपूर उपयोग किया है और सामगान को आधुनिक स्वरलिपि में उदाहरण के तौर पर रखा है।

वैदिकेतर अर्थात् लौकिक संगीत की स्थिति भिन्न है, क्योंकि उसमें लक्षण तो किसी सीमा तक सुरक्षित रह पाया है, किन्तु लक्ष्य मौखिक परम्परा में से होता हुआ अनेक परिवर्तनों का भाजन बना है। इन परिवर्तनों का लेखा-जोखा करना और उस के साथ सातत्य (continuity) की धारा का आकलन अत्यन्त कठिन कार्य है, जो किसी एक अध्ययन में सम्पन्न नहीं हो सकता।

प्रस्तुत ग्रन्थ में वैदिक धारा के निरूपण के पश्चात् रामायण, महाभारत, हरिवंश, पुराण, पाणिनीय अष्टाध्यायी, बौद्ध वाङ्मय एवं जैन वाङ्मय में प्राप्त संगीत-सम्बन्धी उल्लेखों का मूल्यवान् संकलन है। ये सब ऐतिहासिक अध्ययन के आधार हैं। बौद्ध धारा के प्रसंग में भरहुत, साँची और नागार्जुनकोंडा में उकेरे हुए वाद्य और नृत्य के दृश्यों पर भी विस्तार किया गया है। पुरातात्त्विक अवशेषों पर कुछ विचार द्वितीय अध्याय में सिन्धु घाटी-सभ्यता के प्रसंग में भी किया गया है। सिन्धु-सभ्यता प्राग्वैदिक थी या वैदिक? इस प्रश्न को लेखक ने उठाया तो है किन्तु कोई निर्णय नहीं लिया है। जैन वाङ्मय पर विचार के बाद संगीतशास्त्र की कुछ प्राचीन विभूतियों पर एक छोटा अध्याय है, इसमें अधिकांश पौराणिक नामों का संग्रह है। उसके बाद का अध्याय नाट्यशास्त्र के पूर्वकाल पर कुछ विचार प्रस्तुत करता है। उपान्त्य अध्याय में नाट्यशास्त्र के स्वरूप पर विचार है तथा संस्करणों एवं टीकाकारों का विवरण है। अन्तिम अष्टादश अध्याय में, नाट्यशास्त्र में प्राप्त संगीत-विचार का आकलन है। यह उल्लेखनीय है कि नाट्यशास्त्र के केवल अट्ठाइसवें अध्याय पर ही यहाँ विचार हो पाया है, जिसमें कि स्वर, श्रुति, ग्राम, मूर्च्छना, तान, साधारण और जाति का समावेश है। जातियों के विनियोग, वर्ण, अलंकार, वीणा के वादन-प्रकार, ताल, ध्रुवाएँ, अवनद्ध वाद्य—इतने विषय उन्तीसवें से लेकर चौंतीसवें अध्याय तक वर्णित हैं। प्राचीन काल के वाङ्मय में प्राप्त संगीत-सम्बन्धी उल्लेखों का उत्तम संकलन यहाँ प्राप्त होता है।

'वैदिक काल' 'इतिहास काल' जैसी संज्ञाओं से काल की सीधी रेखा की अवधारणा ध्वनित होती है। यह अवधारणा पश्चिम की देन है, जो कि हम लोगों के चित्त में गहरी पैठ गई है। वास्तव में इस देश में अधिकांश घटनाक्रम को सीधी रेखा में रख कर देखना सम्भव नहीं है। बहुत-कुछ एक साथ घटित होता रहा है (concurrence) और बहुत-कुछ में एकाधिक घटनाओं की परस्पर व्याप्ति (overlapping) मिलती है। अस्तु।

—प्रेमलता शर्मा

आधुनिक विज्ञापन

कला एवं व्यवहार

डॉ० अर्जुन तिवारी

मीडिया की सभी विधाओं पर अंग्रेजी में पर्याप्त पुस्तकें हैं। उन्हीं पुस्तकों के अनूदित संस्करण से हिन्दी-जगत् के पत्रकार कुछ सीखने का अधूरा प्रयास करते हैं। अपनी मातृभाषा में मौलिक ग्रन्थों का अभाव हर पत्रकार को खटकता रहा है। आज मैं नि:संकोच भाव से इस तथ्य को प्रकट करता हूँ कि पत्रकारिता के यशस्वी प्राध्यापक डॉ० अर्जुन तिवारी ने अपनी बहुमूल्य, प्रामाणिक 25 पुस्तकों द्वारा हिन्दी पत्रकारिता-जगत् को समृद्ध किया है जिनसे मीडिया के मर्मज्ञों की जिज्ञासा शांत होती है। डॉ० तिवारी की अद्यतन कृति 'विज्ञापन : कला एवं व्यवहार' को पढ़ते समय मुझे पत्रकारिता की एक अद्‌भुत परिभाषा मिली—

''चहकते, चमचमाते, दिलपकड़ विज्ञापनों के बीच एक दबी हुई सूचना ही पत्रकारिता है जिसमें लोक-सेवा के बहाने व्यवसाय-साधना की जाती है।''

इस एक वाक्य में ही डॉ० तिवारी ने पत्रकारिता और विज्ञापन के मूल स्वरूप को सुस्पष्ट कर दिया है। 'विज्ञापन-शासित मीडिया', 'विज्ञापन की अवधारणा', 'विज्ञापन : पब्लिक वेलफेयर का प्रमोटर', 'विज्ञापन, विपणन, प्रचार एवं जनसम्पर्क', 'मार्केटिंग', 'विज्ञापन के मॉडल', 'कॉर्पोरेट विज्ञापन', 'ब्राण्ड', 'ब्राण्ड एम्बेसडर', 'बजट', 'विज्ञापन का इतिहास', 'विज्ञापन और आधी दुनिया', 'विज्ञापन की आचार संहिता' जैसे 35 अध्यायों में डॉ० तिवारी ने विज्ञापन को एक मुकम्मल स्वरूप प्रदान किया है।

प्रिण्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में विज्ञापनों के भारतीय आकार-प्रकार की सोदाहरण प्रस्तुति इस ग्रन्थ की अपनी विशिष्टता है। शुष्क तथ्यों को साहित्यिक दृष्टि से रोचक बनाकर विज्ञापन कला के व्यावहारिक पक्षों के उद्‌घाटन में लेखक को सफलता मिली है। विज्ञापन एजेंसियों, विज्ञापकों, छात्रों एवं प्राध्यापकों के लिए यह ग्रन्थ संग्रहणीय होगा जिसके लेखक डॉ० अर्जुन तिवारी को हार्दिक बधाई।

—प्रो० जे०एस० यादव

पूर्व निदेशक, भारतीय जनसंचार संस्थान
चेयर मैन, इण्टरनेशनल मीडिया इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली

संगीत सूक्ति कोश

अमित कुमार वर्मा

सूक्तियों के सन्दर्भ में कहा गया है कि ज्ञानियों के ज्ञान और युगों के अनुभव सूक्तियों के माध्यम से संरक्षित रहते हैं। संगीत मनीषियों के अनुभवजन्य ज्ञान के मोती हमें सूक्ति के रूप में प्राप्त होते हैं। संक्षेप में कहें तो सूक्ति के गागर में ज्ञान, प्रेरणा और सदुपदेश का सागर समाहित होता है। इस पुस्तक में संगीत तथा संगीत सम्बन्धी विभिन्न बिन्दुओं पर शास्त्रकारों, साहित्यकारों, दार्शनिकों, कलाकारों व संगीत विद्वानों द्वारा व्यक्त किये गये श्रेष्ठतम् विचारों को सूक्ति में संकलित किया गया है। पुस्तक में संगीत, नाद, श्रुति, स्वर, राग, ध्रुपद, ख़याल, घराना, ताल, नृत्य, वाद्य आदि अनेक संगीत सम्बन्धी बिन्दुओं पर सूक्तियों का संकलन है। संगीत के प्राचीन व नवीन ग्रन्थों, पुस्तकों, लेखों आदि में उल्लिखित अधिक से अधिक मूल्यवान विचारों, परिभाषाओं व मतों का संकलन क्रमबद्ध रूप से किया गया है। भारतीय विद्वानों के साथ-साथ पाश्चात्य विद्वानों के संगीत सम्बन्धी विचारों को भी पुस्तक में स्थान दिया गया है। अध्ययन व

शोध सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अधिक से अधिक सूक्तियों के सन्दर्भ स्त्रोत उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है। साथ ही विभिन्न विश्वविद्यालयों के संगीत पाठ्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए पुस्तक की विषय-वस्तु का चयन किया गया है ताकि अधिकाधिक विद्यार्थी व शोधार्थी लाभान्वित हो सकें।

मलिक मुहम्मद जायसी

कृत

'पदुमावति'

[एक नया पाठ और साहित्यिक व्याख्या]

संपादक : **डॉ० कन्हैया सिंह**

'पदुमावति मूलपाठ'
एक ध्यानाकर्षक कृतित्व

डॉ० कन्हैया सिंह पाठानुसंधान, पाठालोचन और पाठ सम्पादन के विशेषज्ञ हैं। उक्त विषय से सम्बन्धित इनकी चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी वैज्ञानिक पद्धति और विश्वसनीयता पर हिन्दी संसार की मुहर लग चुकी है। आपके अनुसंधान का प्रमुख क्षेत्र सूफी सम्प्रदाय और जायसी का काव्य रहा है। ऐसे में यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि उनकी नव प्रकाशित कृति 'पदुमावति : मूलपाठ' कितनी मूल्यवान होगी। वास्तव में पाठानुसंधान का कार्य बहतु-बहुत श्रमसाध्य है और यही कारण है कि इस कृति में विद्वान लेखक को शुद्धि-शोधन के लिए एक-एक शब्द पर जूझते हुए देखते हैं। इस कृति से जायसी के महाकाव्य का मूलपाठ तो निखर कर सामने आयेगा ही, इससे प्राचीन और मध्यकालीन कुछ अन्य कृतियों के पाठानुसंधान के लिए भी प्रेरणा और पथ-संकेत मिलेंगे।

—डॉ० विवेकी राय

आज के दौर में शब्द और उनकी सार्थकता बहुत अहम हो गई है। आज शब्दों के लिए, पुस्तकों के लिए समुद्र की तरह हाहाकार करते हुए आन्दोलन की आवश्यकता है।

स्मृति-शेष

विद्वान दत्तात्रेयनंद नाथ का निधन

वाराणसी। नगवा स्थित श्रीविद्या साधना पीठ के अध्यक्ष **दत्तात्रेयानंद (सीताराम कविराज जी)** का 30 सितम्बर 09 की रात निधन हो गया। वह 84 वर्ष के थे। इनका जन्म राजस्थान के फतेहपुर में हुआ था। अस्सी के दशक में वह काशी आए और स्वामी करपात्री महाराज के विशेष कृपापात्र रहे।

वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० विश्वनाथ प्रसाद का देहावसान

वाराणसी। हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार व यूपी कॉलेज में हिन्दी विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष **डॉ० विश्वनाथ प्रसाद** (72 वर्ष) का लम्बी बीमारी के बाद 1 अक्टूबर 2009 की रात शिवपुर स्थित एक निजी चिकित्सालय में निधन हो गया। डॉ० प्रसाद का जन्म 25 दिसम्बर 1938 को जौनपुर में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा जौनपुर में ग्रहण करने के बाद आपने यूपी कॉलेज में प्रवेश लिया जहाँ स्नातक तक की डिग्री प्राप्त की। एम०ए० बीएचयू से किया। डॉ० प्रसाद 1970 से 1999 तक यूपी कॉलेज में हिन्दी के प्राध्यापक रहे। उन्होंने कई पुस्तकें भी लिखीं। इनमें कविता संग्रह 'आवाज', 'रोशनी नदी की', 'चुटकीभर अपनापन' के अलावा निबन्ध संग्रह 'आम आदमी की लालटेन', 'चौरे का दिया' और उपन्यास 'बीज के रेत' शामिल हैं। उन्होंने खण्डकाव्य 'उपरांत' सहित कई अन्य समीक्षा ग्रन्थ लिखे। राज्य हिन्दी साहित्य संस्थान से उन्हें 'विद्याभूषण' सम्मान से सम्मानित किया गया था। नवगीत पर उनकी एक पुस्तक व दो निबन्ध संग्रह छपने की प्रक्रिया में हैं।

फिल्म-लेखक गुलशन का निधन

फिल्म जगत के मशहूर लेखक **गुलशन बावरा** का हृदय गति रुक जाने से मुम्बई में निधन हो गया। वह 72 साल के थे। फिल्म की दुनिया में उनका पहचान फिल्म 'उपकार' के गीत 'मेरे देश की धरती सोना उगले उगले हीरे मोती' से मिली।

साहित्यकार पुणीन्द्रनाथ मिश्र नहीं रहे

बिहार के वरिष्ठ साहित्यकार एवं पूर्व प्रशासनिक अधिकारी **श्री पुणीन्द्र नाथ मिश्र** (स्वामी पुन्दोतीर्णानन्दपुरी) का गत 14 जून 2009 को स्वर्गवास हो गया। वे 75 वर्ष के थे।

स्व० मिश्रजी का जन्म ग्राम-पोस्ट मठोला कुरान सरैया, बक्सर में 12 जनवरी 1935 ई० को हुआ था। 1958 से 1989 तक बिहार सरकार की प्रशासनिक सेवा में रहते हुए वे साहित्य साधना में विरत रहे। उन्होंने गीत, गजल, कहानी, समीक्षा, व्यंग्य, आलेख, संस्मरण आदि विधाओं में पर्याप्त लेखन कार्य किया।

मन्मथनाथ दास नहीं रहे

भुवनेश्वर, प्रख्यात इतिहासकार, शिक्षाविद् और सांसद **मन्मथनाथ दास** का लम्बी बीमारी के बाद निधन हो गया। वे 84 वर्ष के थे। किताबों के लेखक और उत्कल विश्वविद्यालय के कुलपति रह चुके दास पिछले कुछ महीनों से गम्भीर रूप से बीमार थे।

प्रवीर घोष का निधन

कोलकाता, युवा पत्रकार व साहित्यकार **प्रवीर घोष** का 25 जुलाई को 38 वर्ष की आयु में हृदयाघात से निधन हो गया। उन्होंने बहुत पहले घोषणा की थी कि उनकी मौत के बाद अस्पताल में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए उनकी देह दान में दे दी जाए। उनकी इच्छानुसार उनके शव को एस०एस०के०एम० अस्पताल को सौंप दिया गया।

प्रो० श्री ना० नागप्पा का देहावसान

मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष **प्रो० ना० नागप्पा** का बेंगलूर में 97 वर्ष की उम्र में दि० 5 जुलाई, 2009 को निधन हो गया। महात्मा गाँधी के विचारों से प्रभावित होकर आपने अपना कार्यक्षेत्र हिन्दी अध्ययन-अध्यापन को बनाया। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन करते हुए आपने 1935 में हिन्दी साहित्य में एम०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की और मैसूर लौटकर हिन्दी के प्रचार में लगाए गए। नागप्पा जी कर्नाटक के सर्वप्रथम हिन्दी एम०ए० थे। सन् 1972 में मैसूर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर और हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के पद से सेवानिवृत्त हुए और अपने अन्तिम क्षण तक हिन्दी की सेवा में लगे रहे।

नागप्पाजी हिन्दी के अच्छे लेखक, अनुवादक और समीक्षक थे। उनकी मौलिक रचनाएँ- व्यावहारिक हिन्दी, अभिनव हिन्दी व्याकरण, बुआजी (कहानी-संग्रह), कर्नाटक में हिन्दी प्रचार, हिन्दी साहित्य का अध्ययन, 'हिन्दी-कन्नड़-अंग्रेजी' कोश आदि हैं। उन्होंने अंग्रेजी तथा कन्नड़ से हिन्दी में अनुवाद भी किए।

यदि हमारा विश्वास हमारी भाषाओं पर से उठ गया हो तो वह इस बात की निशानी है कि हमारा अपने आप पर विश्वास नहीं रहा। यह हमारी गिरी हुई हालत की निशानी है और जो भाषाएँ हमारी माताएँ बोलती हैं उनके लिए हमें जरा भी मान न हो, तो किसी तरह की स्वराज्य की योजना भले ही वह कितनी भी परोपकारी वृत्ति या उदारता से हमें दी जाए, हमें कभी स्वराज्य भोगनेवाली प्रजा नहीं बना सकेगी।

—महात्मा गाँधी

प्राप्त पुस्तकें और पत्रिकाएँ

उर्दू शायरी में भारतीयता : डॉ० बानो सरताज, अभय प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली 110030, मूल्य : 200/- रु० मात्र।

इस ग्रन्थ में विषय को अर्थापित करते हुए आठ शोध-पत्र प्रस्तुत किये गये हैं। लेखिका डॉ० बानो सरताज ने भारतीय सांस्कृतिक-समरसता को उर्दू शायरी में तलाश करते हुए महसूस किया है कि ''दिलों का, संस्कृति का, मानवता का, अपनेपन का संगम समस्त तीर्थों से बड़ा होता है × × दरियाओं के संगम से बढ़कर/ तहजीब का संगम होता है।''

अँखियाँ पानी पानी : विजयलक्ष्मी 'विभा', प्रकाशक : साहित्य सदन, 149-जी/2 चकिया, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश), मूल्य : 150/- रु० मात्र।

कवियित्री के आत्म-संस्कारों के बीज का प्रस्फुटन और अंकुरण है भक्ति-पदों का संकलन 'अँखियाँ पानी पानी'। नवधा-भक्ति के सख्य, दास्य, प्रिय आदि भावों से अंतर्मन की व्यंजना को मुखर करने की अनायास प्रवृत्ति में जगत् से मुक्ति और प्रभुचरणों में सद्गति की आकांक्षा लक्षित होती है। × × ''किसी रूप में तू आ जाये, मैं तो कोरा मन हूँ/तेरी छवि दिखलाकर तुझको, हो जाती अर्पन हूँ।''

प्रेम-पीयूष : डॉ० संत कुमार टंडन 'रसिक', प्रकाशक : राष्ट्रीय राजभाषा पीठ, 535/1-आर, मीरापुर, इलाहाबाद, मूल्य : 75/- रु० मात्र।

प्रणय-भाव की व्यंजना करते 270 दोहों का संकलन है 'रसिक' जी की रचना 'प्रेम-पीयूष'। स्थूल से सूक्ष्म की ओर, देह से आत्मा की ओर बढ़ते हुए कवि के उद्गार हैं × × ''हुआ आस्था का मिलन, नश्वर मिलन शरीर/मैं फकीर से हो गया कितना 'रसिक' अमीर।''

चिल्होर : डॉ० मुनि देवेन्द्र सिंह, प्रकाशक : साहित्य सहकार, 21/62-बी, गली नं० 11, विश्वास नगर, दिल्ली 110032, मूल्य : 150/- रु० मात्र।

पेशे से चिकित्सक और मन से संवेदनशील कवि ने अपनी मातृभाषा भोजपुरी में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। बोली की लोच, मुहावरों की जमीनी व्यंजना और गाँव-गिराँव की ज़िन्दगी से जुड़ी बिम्ब योजना इन रचनाओं को गम्भीर अर्थवत्ता प्रदान करते हैं।

क्रांतिबा फुले : (नाटक) प्रा० रतनलाल सोनग्रा, जीवन प्रभात प्रकाशन, मुम्बई-400056।

सामाजिक क्रांति के मंत्रद्रष्टा महात्मा ज्योतिराव फुले के जीवन पर आधारित चित्रपट शैली की नाट्यरचना है 'क्रांतिबा फुले'। प्रस्तुत नाट्य-आलेख महात्माफुले के संघर्ष और क्रांति का रेखांकन करते हुए क्रांति की निरन्तरता का संदेश देता है।

वैदिक हवन पद्धति, संकलन : मधु वार्ष्णेय, इमेज इंडिया पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, सहयोग राशि : 150/- रु० मात्र

स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्यसमाज की वैदिक उपासना एवं यज्ञ-हवन पद्धति से सम्बद्ध सूत्रों और मंत्रों का यह संकलन आर्य धर्म को समझने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इसमें संस्कृत मंत्रों की सरल हिन्दी-अंग्रेजी व्याख्या भी समाहित है।

भारत की हिन्दी ही राष्ट्रभाषा क्यों हो ?, लेखक : डॉ० बाबूलाल वत्स, प्रकाशक : राष्ट्रभारती परिषद्, दयालबाग, आगरा।

पुस्तिका के शीर्षक के अनुरूप लेखक ने राष्ट्रभाषा के सन्दर्भ में विभिन्न बिन्दुओं पर विचार करते हुए अपनी बात रखी है।

मंगल प्रभात (सितम्बर 09), सम्पादक : डॉ० रमेश भारद्वाज, गाँधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, राजघाट, नई दिल्ली

वर्तमान साहित्य (अगस्त एवं सितम्बर 09), सम्पादक : कुँवरपाल सिंह, 28, एम०आई०जी०, अवंतिका-1, रामघाट रोड, अलीगढ़-202001

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 10 **सितम्बर-अक्टूबर 09** **अंक : 9-10**

संस्थापक एवं पूर्व प्रधान संपादक

स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी

संपादक : **परागकुमार मोदी**

वार्षिक शुल्क : रु० 50.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी *द्वारा मुद्रित*

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003 RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at

G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

☎ : Offi. : (0542) 2413741, 2413082, 2421472, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2413082

E-mail : sales@vvpbooks.com ● Website : **www.vvpbooks.com**

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बॉक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIANS)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)